अर्थात्

गृहस्थ स्त्रियोंके कर्तव्यकर्मका संक्षिप्त विवरण.

गन्नौर (जिलअ दिल्ली) निवासी

लाला हरप्रसादमल्लजीसुत जयदयालमल्ल

दिगम्बर जैनद्वारा लिखित.

मुंबईमें—निर्णयसागर छापाखानामें छपा.

प्रथमावृत्ति १००० { जैन संवत २४३३, सन् १९०७ } मूल्य. ॥)

धन्यवाद.



इस पुस्तकके प्रचारार्थ नीचे लिखे महाशयोंने अपनी उदार और पारमार्थिक बुद्धिद्वारा आर्थिक सहायता देकर अपना श्रेष्ठत्वपना सफल किया है. अतएव पूर्ण धन्यवादके पात्र हैं.

१५०, श्रीयुत सेठ गंगारामजी गुलाबचंदजी–रतलाम.

१५, एक गुप्त सज्जन महाशय–उज्जैन.

५, ग्रंथकर्त्ता.

परमार्थियोंका कृतज्ञ,

जयदयालमल्ल,

गन्नौर (दिल्ली).

भूमिका.

यद्यपि इस निकृष्ट कालमें भी जगत् प्रसिद्ध जैनजातिने अपनी उत्कृष्टता एवं सदाचारको सर्वथा नहीं छोड़दिया है. तथापि कुसंगनिवास, अभक्ष्य पदार्थोंके विशेषप्रचार, शुद्ध पदार्थोंके कठिनतापूर्वक प्राप्त होने और विशेषकर स्त्रियोंके अनपढ़ रहनेके कारण बहुतसे दोष इस जातिके सदाचरणोंमें मिलगये है जिससे यह जाति दिन परदिन हीन होती जाती है. इसलिये दोषोंके निराकरण और सद्गुणोंकी प्राप्तिके अर्थ इस पुस्तकके लिखनेका प्रयत्न किया गया है.

जहांतक संभव हुआ यह पुस्तक बहुत विचारपूर्वक, जैनशास्त्रानुसार, धर्मानुरागद्वारा लिखी गई है. इसमें मुख्योद्देश यही रक्खागया है कि जिससे जैनजातिका आचरण पूर्ववत अटल एवं शुद्ध बना रहकर सांसारिक और पारलौकिक सुखसमृद्धिकी प्राप्ति हो. इसमें स्त्रियोंके जन्मपर्यंतके कर्तव्य कर्मोंका वर्णन यथावत् किया गया है जिससे उनका जन्म सफल हो.

यद्यपि इसग्रंथमें कोइ भी शब्द रागद्वेष भावसे नहीं लिखागया तथापि पंडितजनोंसे प्रार्थना है कि यदि किसी स्थानपर कोई त्रुटि ज्ञात हो तो अपने महानुभावद्वारा क्षमा करके मुझे अनुगृहीत करें.

हर्षका विषय है कि पवित्र पुण्य क्षेत्र मालव प्रान्तस्थ मन्दसौर (दशांगपुर) निवासिनी श्रीमती सुयोग्य पंडिता श्रृंगारबाई जी, रतलामस्थ विद्योत्साही भाई दरयावसिह सोधिया, बडनगरस्थ सदाचारी लाला भगवानदासजी, जयपुरनिवासी साहित्यभूषण मि. जैनवैद्य

और उनकी सहधर्मिणीने इस पुस्तककी हस्तलिखित कापी संशोधन कि है. इसलिये हम उनके अति आभारी है.

पुनः गुणग्राही, हितवांछक भाइयों और बहनोंसे निवेदन है कि वे इस पुस्तकको आद्योपान्त पढ़कर और इसके आशयको समझकर धर्मोन्नतिमें प्रवर्तकर मुझे कृतार्थ करें.

जैन संवत् २४३२
अक्षयतृतीया
गन्नौर (दिल्ली)



सज्जनोंका सेवक,
जयदयालमल्लादि० जैन.

अनुक्रमणिका.

प्रथम प्रकरण—स्त्रीपर्याय.	१
द्वितीय प्रकरण—स्त्रीशिक्षा.	१९
तृतीय प्रकरण—स्त्रियोंकी नित्यचर्या.	४४
चतुर्थ प्रकरण—ऋतुक्रिया विचार.	७४
पंचम प्रकरण—मिथ्यात्वनिषेध	९४
षष्ठ प्रकरण—विधवाओंका कर्तव्य	११७
सप्तम प्रकरण—सूतकनिर्णय	१३२

नोट—इसके अतिरिक्त प्रत्येक प्रकरणके अंतर्गत बहुतसी ऐसी २ बातेंभी लिखी गई हैं जो स्त्रियोंकेलिये अत्यन्त उपयोगी और ग्रहण करनेयोग्य हैं.

श्रीवीतरागाय नमः

श्रावकबनिता बोधिनी.

प्रथम प्रकरण.

स्त्रीपर्याय

दोहा।

दोष रहित गुणगण सहित चौवीसों जिनराज।
मन वच तन करि नमत हों सिद्ध होनके काज ॥ १ ॥
प्रणमूं श्रीगुरुके चरण, जे निर्ग्रंथ सज्ञान ॥
पुनि बंदौं जिन धर्मकूं, मिथ्या तम हर भान ॥ २ ॥
कालदोषके कारणैं, मति गति भइ अति हीन ॥
श्रद्धा ज्ञानाचरण तप, दिन २ होन मलीन ॥ ३ ॥
उत्तम ज्ञातिन मध्यलखि, क्रिया अधिक निकृष्ट ॥
श्रावक बनिता बोधिनी, लिखूं सबन हित इष्ट ॥ ४ ॥

इस संसारमें जितने जीव हैं वे सबही सुखकी प्राप्ति और दुखका नाश चाहते हैं ऐसा कोई भी जीव नहीं; जो दुखसे डरकर सुखकी इच्छा न करता हो। परंतु वे सुखके उत्पन्न होने और दुखके नाश करनेका यथार्थ

कारण न जाननेसे और प्रतिकूल आचरण करनेके कारण नाना प्रकारके मानसिक और शारीरिक दुःखोंसें दुखी होरहे हैं फिर शास्त्रोंमें कहे हुए नर्कगतिके घोर दुःखोंका तो स्मरण करनेसेही यकायक कलेजा कांप उठता है.

वास्तवमें विचारकर देखा जाय तो जगतमें सब जीव धर्म २ तो कहते हैं पर धर्मके स्वरूपको नहीं जानते, जिससे अंधेकी नाई भटकते हुए नाना प्रकारकी दुःखरूप टक्करें खाते हैं। इसलिये श्रीगुरूने करुणाबुद्धि द्वारा धर्मका उपदेश देकर सच्चेसुख प्राप्त करनेका उपाय बताया है तदनुसार यहांपर कुछ लिखा जाता है आशा है कि हमारे भाई और बहिनें इसपर ध्यान देवेंगी॥

प्रगट रहे कि आत्माके स्वभावको धर्म कहते हैं इस धर्मको जानकर इसमें आचरण करनेसेही दुःखका नाश होकर सच्चा और स्वाधीन सुख मिलता है. इसे सब बुद्धिमान और आस्तिक मतवाले निर्विवाद स्वीकार करते हैं कि बिना धर्मके सुखकी प्राप्ति होना असंभव है.

यह आत्माका धर्म याने रागद्वेष रहित देखना जानना अनादिकालसे हिंसा, असत्य, चोरी, कुशील और तृष्णा आदि पाप कर्मरूप प्रवृत्तिके कारण मलीन अर्थात् राग-द्वेषरूप हो रहा है इसलिये उसे शुद्ध करनेके लिये इन पापोंको छोड़ अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और

संतोषरूप प्रवर्तनेका उपदेश हमारे आचार्योंने जहां तहां दिया है और आत्माके धर्मको साधनेवाले इन पांच पापोंके त्यागको धर्म कहा है क्योंकि इसके धारण करनेसे ही हम संसारके दुःखोंसे रहितहोकर निजानन्द और परमात्म दशाको प्राप्त होकर सच्चे सुखी होसक्ते हैं. सोही श्रीरत्नकरंडश्रावकाचारमें कहा है. कि—

धर्म वही है कि जो नर्क पशु आदि कुगतिके असह्य, निकृष्ट दुःखोंसे निकाल स्वर्ग मोक्षके उत्कृष्ट सुखोंको प्राप्त करे. सो ऐसा वास्तविक और सच्चा धर्म और कुछ नहीं है केवल इस आत्माका स्वभाव है और इसी स्वभावको प्राप्ति करलेना यथार्थ धर्म है तथा जिन उपायोंके करनेसे यह जीवात्मा अनादि कर्मरोगसे निर्वृत्त होकर रागद्वेषरूप अशुद्धताको छोड़ शुद्ध परमात्मा हो उन्हीं उपायों अर्थात् कारणोंका नाम व्यवहार धर्म है और जिसके अनुसार आचरण करनाही हमारा परम पुरुषार्थ है. इसीलिये यहांपर उस व्यवहार धर्मका वर्णन किया जाता है क्योंकि यह निश्चय धर्मकी उत्पत्तिका कारण है.

इन्द्रियोंकी लम्पटता द्वारा उत्पन्न हुए पंच पापोंकी प्रवृत्ति तथा क्रोधादि चारों कषायोंकी उत्पत्तिको रोकनेवाला यह व्यवहार धर्मही है. जो मुनिव्रत तथा श्रावकव्रतके भेदसे पालन किया जाता है. मुनिधर्म तेरह प्र-

कार चारित्ररूप है. पंचमहाव्रत, पंचसमिति और तीन-गुप्ति. पुनः श्रावकव्रत द्वादशभेदरूप है-पंचअणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत. तथा ग्यारह प्रतिमा रूपभी श्रावक धर्म है. इस स्थानपर श्रावक तथा मुनिव्रतका व्याख्यान करनेसे पुस्तक बहुत बढ़नेके सिवाय इष्ट प्रयोजनकी हानि होगी. इसलिये जिनको इसका पूरा व्योरा मालूम करना हो वे श्रीमूलाचारजी, श्रीपुरुषार्थसिद्ध्युपायजी, श्रीस्वामी कार्तिकेयानुप्रेक्षाजी तथा अन्य आचार शास्त्रोंसे ज्ञात करें.

निश्चय रहे कि जो पुरुष श्रावकव्रतकी ११ प्रतिमा भलीभांति नहीं पालन कर सक्ता वह कदापि मुनिव्रत धारण करने योग्य नहीं है. इसीप्रकार श्रावकव्रतके पालनेकी योग्यता तबही होसक्ती है जब पहिले मिथ्यात्व, अन्याय और अभक्ष्यका त्याग किया जाय. जो स्त्री व पुरुष इन महान् पापोंको सेवन करता हुआ भी अपनेको व्रती श्रावक कहता है वह मानो अक्षर ज्ञानरहित पुरुषको पंडित बताता है. अतएव जो स्त्री व पुरुष सच्चे सुखको चाहते हैं उनका ये तीनों दोष सर्वथा त्यागने योग्य हैं.

वर्तमानकालमें गृहस्थाश्रमकी अवस्थाको देख खेदपूर्वक कहना पड़ता है कि इस विकराल पंचम कालके

पापमय समयमें यह तीनों दोष जैनजातिमें दिनपर दिन बढ़तेही चले जा रहे हैं और गृहस्थोंका क्रियाकांड इतना बिगड़ता चला जा रहा है कि जिसका वर्णन करते "आपन जांघ उघारिये आपहि मरिये लाज" की कहावत चरितार्थ होती है. यही कारण है कि आजकल मुनियोंका सद्भाव तो दूरही रहा किन्तु प्रतिमाधारी, त्यागी, संयमी पुरुषोंका हमारे देशमें एक प्रकारसे अभाव ही सा दृष्टिगोचर होरहा है. शास्त्रोंके अध्ययन करनेसे ज्ञात होता है कि प्राचीनकालमें इस देशमें सहस्रों मुनियोंके समूहके समूह स्थान स्थानपर भ्रमण कर धर्मोपदेश दे धर्मकी रक्षा, उन्नति व प्रभावना करते थे. जिनको श्रावकलोग भक्तिपूर्वक आहार दानादि दे गृहस्थाश्रम सफल करते थे. इसीसे ज्ञात होता है कि उस समय जैनीमात्रके घरमें शास्त्रोक्त विधिपूर्वक शुद्ध आहारादिकी योग्यता थी. और तबही इतने संयमी पुरुषोंका भोजन दोषरहित निर्वाह होता था. उस समय सर्व स्त्री पुरुष शास्त्रोंके ज्ञाता होते थे, वे अच्छी तरह समझते थे कि साधु, संयमीको आहार कराये बिना भोजन करना अयोग्य और गृहस्थ धर्मके विरुद्ध है. इसलिये वे भोजन करनेके पहिले द्वारापेक्षण करते और जब कोई उत्तम महापुरुष साधु संयमीको आहार

दान देते तो अपना अहोभाग्य समझते थे. यदि किसी साधु व उत्तम श्रावकका संयोग न मिले तो वे अपनी आत्मनिन्दाकर साधुओंके भोजन समयको उल्लंघ्य आप भोजन करते थे. उनको यह बात अच्छीतरह मालूम थी कि गृहस्थीका घर षट्कर्मोंकी आरंभी हिंसाके कारण स्मशान समान है सो बिना अतिथि संविभागके कदापि सफल और शुद्ध नहीं होसक्ता.

वर्तमानमें जैनियोंकी खानपान क्रिया इतनी नष्ट भृष्ट होरही है कि यदि थोड़े भी संयमका धारी, शुद्ध और मर्यादापूर्वक भोजन करनेवाला एक भी साधर्मी सज्जन कर्मयोगसे किसीके घर आजावे तो उसके भोजन योग्य सामग्रीका मिलना कठिन होजाता है. जैसे तैसे सामग्रीका मेल भी मिला दिया जाय तो क्रियापूर्वक भोजन तय्यार करनेवालोंका अभाव पायाजाता है क्योंकि प्रायः गृहस्थस्त्रियां क्रियापूर्वक रसोई की विधिसे अनजान है. ऐसी अवस्थामें यदि दो चार संयमी पुरुष किसी स्थानपर आजायं तो कहिये उनको शुद्ध भोजन की प्राप्ति कैसे हो ? बहुत खेदके साथ कहना पड़ता है कि ऐसेही दोषोंसे इस निकृष्टकालमें साधुव्रतको धारना अति कठिन होगया है. यहांतक कि कोई क्षुल्लक व्रतके धारनेका भी साहस नहीं करता. भाइयो ! इसी कारण

त्यागी सत्पुरुषोंके अभावसे जैनजातिसे उपदेश उठगया. और इसीसे मिथ्यात्व, अन्याय और अभक्ष्यका ज़ोर बढ़गया. जो महान् पुरुष स्वपरविज्ञान रत्नसे विभूषित होकर संसार, शरीर और भोगोंसे ममत्व घटाना चाहते हैं उन्हें शुद्ध खानपानकी योग्यता न मिलनेके कारण लाचार हो अपने गृहहीमें श्रावकव्रत पाल संतोष करना पड़ता है. क्योंकि धर्मात्माओंके लिये रागद्वेष मेटने-वाली, सुबुद्धिको उत्पन्न करनेवाली शुद्ध क्रिया और आहार विधिकी विशेष आवश्यकता है क्योंकि बुद्धि मलीन और धर्मसे अरुचि होनेका मुख्य कारण एक शुद्धा-चरण की हीनता है. केवल इतनाही नहीं वरन निर्ध-नता व मूर्खता होनेका एक असाधारण कारण अना-चारही है. दुःख, शोक, रोगादिककी वृद्धि भी खानपा-नकी भ्रष्टतासे ही होती है. ऐसा जान जैनीमात्रको अपने २ घरके क्रियाकांड और खानपानपर लक्ष्य देकर ठीक करना व जो कुछ कमी हो उसे दूर करना चाहिये.

रसोई आदिकी सम्पूर्ण क्रिया गृहस्थोंके घरमें स्त्रियोंके आधीन है. इसलिये यदि स्त्रियां बुद्धिमती, विदुषी और शास्त्रोंके रहस्यसे विज्ञ हों तो अवश्य रसोई शुद्ध तयार हो. और कोई उन्हें अशुद्धाचरणका उलहना न देसके. इसके विरुद्ध जब स्त्रियां अनपढ़ और मूर्खा

होती हैं तब एक खानपान क्या? गृहस्थीका हरएक काम अविवेकतापूर्वक करती हैं. क्योंकि प्रथम तो स्त्रियोंका स्वभाव ही चंचल होता है पुनः उनके चंचल मनरूपी अश्वके रोकनेको ज्ञानरूप लगाम नहीं. इसीकारण वे विचारी प्रत्येक कामको विना सोचे शीघ्रतासे अयत्नाचारपूर्वक कर बैठती हैं. वे शास्त्रोक्तरीतिसे गृहस्थीके कार्य, चक्की, चूल्हा, रसोई, ओखली, पानी छानना, बुहारना आदि क्रियाओंकी विधि ठीक २ नहीं जानतीं इसलिये हरएक काममें दया और शुद्धताका तो नाममात्र भी विचार नहीं करसक्तीं, सो इसमें बिचारी स्त्रियोंही का क्या दोष? पुरुषोंकी मूर्खता तो उनसे भी बढ़कर है जो स्त्रियोंको केवल सन्तानोत्पत्तिहीका कारण समझ पशुसमान मूर्ख रहने देते हैं. यह नहीं जानते कि पुरुषोंका काम तो केवल न्यायपूर्वक द्रव्य कमानेका है. गृहस्थीके सम्पूर्ण काम चलानेके लिये विश्वकर्मा तो स्त्रियेंही हैं. ऐसे ही अविवेकी पुरुष अज्ञानतासे घरमें स्त्रीने जैसा शुद्धाशुद्ध भोजन तय्यार किया हो उसे बिना देखे परखे, पूंछे ताछे वैसाही पशुके समान भक्षण कर संतुष्ट हो अपनेको कृतकृत्य मानते हैं, कुछ बिचार तो कीजिये कि जब पढ़े लिखे तथा नित्य शास्त्रजी सुननेवाले, पंडितोंकी संगतिमें रहनेवाले

पुरुषोंका यह भ्रष्टाचार है तो स्त्रियोंको क्या गरज़ पड़ी है जो बहुत सा समय खर्चकर धैर्यता और युक्तिपूर्वक सामग्री शोध रसोई तथा और २ गृहस्थीके कार्य करें. इसके विपरीत कहीं २ ऐसा देखा जाता है कि स्त्रियें शुद्ध आचारयुक्त होतीं और अपने करनेके रसोई आदि सम्पूर्ण कार्योंको हिंसादिक दोष टाल, संयम पलने योग्य करती हैं क्योंकि वे शास्त्रोंको पढ़कर व विद्वानोंके मुखसे सुनकर यह बात भलीभांति जानती हैं कि जो हम प्रमाद तथा अज्ञानतासे हिंसादिक पंचपाप उपार्जन करेंगी तो इसका कड़ुवा फल हमहीको भोगना पड़ेगा, पति तो घरके काम देखने आता नहीं, पाप पुन्य तो हमारेही शिर है ऐसा समझ वे ज्ञानी स्त्रियें चूल्हे चौके की शुद्धता, शरीर वस्त्रादिककी पवित्रता, रसोईकी सामग्रीकी मर्यादा तथा वर्तनादिककी सफाईका ध्यान रख भोजन तय्यार करती हैं परंतु पुरुषोंका आचार ऐसा भ्रष्ट होरहा है कि आप जूता पहिनें, बाजारके कपड़ोंसहित दुकानपर या चौकेके बाहिरही हलवाईकी दुकानकी अशुद्ध सामग्री मंगाकर खड़े २ व बैठे २ रात्रि-को भी जिस तिस प्रकार भक्षण करलेते हैं. ऐसी दशामें बिचारी स्त्रियोंका क्या दोष है. किन्तु यह दशा जैनि-योंमें दशहजार पीछे शायद एक दो स्त्रियोंकी हो तो हो,

शेषतो बिचारी जानतीही नहीं कि शुद्ध अशुद्ध भोजन व पापपुन्य किसे कहते हैं? वे विचारी तो जिसतरह हो. अपने पति आदि कुटुम्बियोंके लिये जिस तिस प्रकार भोजन बनाके रखदेती हैं? इसीलिये खेदके साथ कहना पड़ता है कि हम गृहस्थियोंकी क्रिया पूरी २ भ्रष्ट होरही है. इसलिये हमारा कहना अपनी प्यारी बहनोंसे यही है कि वे अपने जिम्मेके कार्योंको निर्दोष रीतिसे पूराकर पापसे बचें, व्यर्थ नाम धराई न करावें और अपने पतिको भी सुमार्गपर लानेका यथाशक्ति प्रयत्न करें. क्योंकि गृहस्थी सम्बन्धी कार्योंमें प्रमाद, अज्ञान तथा कषायवश जो पाप लगता है उसकी भोक्ता स्त्रीही हैं इसलिये पानी छानना, चूल्हे (रसोई) का कार्य, ओखलीका कार्य, चक्कीका कार्य, वुहारना आदि बहुत विचार और यत्न-पूर्वक करना उनका परम कर्तव्य है. चाहे स्त्रियें उपवास व शास्त्रश्रवणादिक कितनाही क्यों न करें किन्तु गृहस्थीके खानपानादि कार्योंमें विवेक न रखनेसे उनकी सर्व धर्मनिष्ठा निष्फल होजाती है. क्योंकि धर्म करनेका फल तो यही था कि हिंसा कषायादिकसे बचें न कि उल्टा हिंसादिक करके पाप पैदाकरें. सो यह बात जगत् प्रसिद्धही है कि पुन्यका फल सुख तथा पापका फल दुःख है इसलिये प्रत्येक जीव को पापसे डर अपने कर्तव्यको

अच्छी तरह समझ यत्नाचारसे सर्व व्यवहार करना योग्य है. ऐसा जानकर भी जो स्त्रियां असावधान रहती हैं वे अपने हाथसे अपने सिर पापका बोझ लादती हैं जिससे वर्तमान पर्यायहीमें नाना प्रकारके कष्ट भोगने पड़ते हैं और भविष्यके लिये नरक, तिर्यंचादि गतिका बंध होता है. जहां लाचार हो नानाप्रकारकी वेदना भोगनी पड़ती है. शास्त्रोंका कथन है कि प्रथम तो स्त्रीकी पर्यायही निन्द्य है जो कुत्सित कर्मोंके उदयसे प्राप्त होती है. जिसने पूर्वजन्ममें मिथ्यात्व सेवन अर्थात् कुगुरु, कुदेव, कुधर्मका आराधन किया होय, अभक्ष्य भक्षण, रात्रि भोजन किया होय, अनछान्या पानी पिया होय तीव्र मायाचार किया होय, इत्यादि खोटे २ कर्म उपार्जन करनेसे स्त्रीपर्याय प्राप्त होती है. स्त्रीका महानिंद्य शरीर मोहका महल है, इसके सिवाय इतने अवगुण तो स्त्रीमें स्वभावसिद्ध होते हैं. ऐसा वर्तमान कालके नीतिकारोंने कहा है.

श्लोक.

अनृतं, साहसं, माया, मूर्खत्वमतिलोभता ।
अशुचित्वं शरीराणां, स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ॥ १ ॥

अर्थात् झूठ, साहस, मायाचार, मूर्खता, अति लोभता, अपवित्रता यह दोष स्त्रियोंमें स्वाभाविकही हैं. सो

यह वचन भारत भगनियोंकी वर्तमान स्वाभाविक अवस्थाहीको दिखलाता है. प्राचीनकालकी व आधुनिक विदुषी स्त्रियोंके ऊपर यह दोषारोपण नहीं किया जासक्ता.

इसके सिवाय सम्पूर्ण आयुभर स्त्रीपर्यायमें पराधीनता पूर्वक अनेक प्रकारके दुख भी भोगने पड़ते हैं जिसका वर्णन दिग्दर्शन मात्र यहां किया जाता है.

लावनी.

महा निंद्य पर्याय त्रियाकी, महा कुटिल भावोंका फल ।
तीनों पन दुख भुगते योंही, नहीं सुक्ख नारीको पल ॥
बालयुवा अरु बृद्धपनेमें, रहे पिता, पति, पुत्राधीन ।
पद पद पर अपमान सहत है, मनही मन रहती अतिदीन ॥
वांझपना, विधवापन, रोगी, पुत्र नपुंसक पति दुख भूर ।
सर्व सुखोंमें एक दुःख हो, तो हिरदा हो चकनाचूर ॥
सदा काल पद पद परदुख है, सुख नहिं होता रंचक पल ।
तीनों पन दुख भुगते योंही, नहीं सुक्ख नारीको पल ॥१॥
वर्णन कहं लग करों गुणीजन, थोड़ेमें समझो सर्वंग ।
महादुक्खकी खानि जन्मत्रिय, जान पराश्रय रहतीतंग ॥
दुर्व्यसनी व्यभिचारी तियकी, करें प्रशंसा मतिके भंग ।
कै नारीकी खांय कमाई, सो सराहते त्रियका अंग ॥
पुत्रीके लेदाम चहें आराम, जीभके जोहैं चपल ।
तीनों पन दुख भुगते योंही, नहीं सुक्ख नारीको पल ॥२॥

इस विधि अपनी निन्दा सुनकर, मनमें चेतो सबही नार।
तजो कुमारग लगो सुमारग, करो काम सब सोच विचार ॥
फिर यह अवसर मिलना दुर्लभ, समय न पाओ वारंवार।
मनुष देह उत्तम जिन मारग, करलो निज आतम उद्धार ॥
करुणा कर दीन्ही है शिक्षा, श्रीगुरुका यह वचन अटल।
तीनों पन दुख भुगते योंहीं, नहीं सुक्ख नारीको पल ॥३॥
लखो निन्द पर्याय आपनी, दुक्ख रूप जानो जो येह।
करो धर्मसे प्रीति सदा ज्यों, फिर न मिले तिरियाकी देह ॥
देख शोधकरि करो रसोई, तजो सकल मिथ्यामति जेह।
पति आज्ञा नित शिरपर धारो, सबकुटुम्बसे करो सनेह ॥
जयदयाल धर्मानुराग लखि, करो मनुज पर्याय सफल।
तीनोपन दुख भुगते योंही, नहीं सुक्ख नारीको पल ॥४॥

देखो! ऐसी स्त्रीपर्यायको पाकर भी प्राचीनकालमें पतिव्रता स्त्रियोंने किसप्रकार निज कर्तव्य पालन कर संसारके लिये नमूना बनने उपरान्त अपना आत्म कल्याण किया. श्रीहरिवंश पुराणसे जाना जाता है कि जब बाईसवें तीर्थंकर श्रीनेमिनाथ स्वामी विवाहके समय रथमें विराजमान होकर वरातसहित ससुराल जारहे थे. तब मार्गमें बहुतसे पशुओंको एक वाड़ेमें रुके देखकर इसका कारण सारथीसे पूंछा, तब सारथीने हाथ जोड़ सविनय निवेदन किया, हे नाथ! हे दीनदयाल, करुणासागर! ये

सब मूकजीव आपकी बरातमें आये हुए भीलादि मांस भक्षियोंके निमित्त रोके गये हैं, सो आपको अनाथ रक्षक जान यह पुकार कररहे हैं कि "हे नाथ! हमारी रक्षा करो," ऐसे करुणाउत्पादक धर्म-वचन सारथीके मुखसे सुन और अवधि ज्ञान द्वारा श्रीकृष्णजीका प्रपंच जान मनमें विचारने लगे, "अहो धिक्कार! इस वेश्यासमान चंचल राज लक्ष्मीको और वार २ धिक्कार है इन रोगसमान भोगोंको जिनके निमित्त महान पुरुष भी निडर होकर पापकर्मोंमें तत्पर होजाते हैं, ऐसा विचार होतेही विवाहके सम्पूर्ण कार्योंको छोड़, भोगोंसे मुख मोड़, हाथसे कंकण तोड़ दूर फेंक दिया और संसार उदासी मोक्ष अभिलाषी जिनराज द्वादश अनुप्रेक्षाका चिंतवनकर श्री गिरनार पर्वतपर दिगम्बर दिक्षाधार आत्महित करने लगे.

जिससमय राज दुलारी, राजा उग्रसेनकी कुमारी श्रीमती राजुलदेवीने जो विवाहोत्सवके कारण और श्रीनेमनाथजी सरीखे त्रैलोक्यनाथ पतिके प्राप्त होनेसे हर्षमें मग्नथी यह हाल सविस्तर सुना कि श्रीनेमकुमारने मुनिव्रत धारणकर लिया. तब आप अतिखेद खिन्न हो मनमें विचार करने लगी कि हाय २ कर्मोंका विचित्र चरित्र देखो जो क्षणमें कुछ का कुछ होगया, मैंने पूर्व जन्ममें कोई ऐसेही तीव्र पापकर्म किये होंगे जिनकी

उदय अवस्थामें ऐसी पराधीन निंद्य कष्टकी खानि स्त्रीपर्याय पाई, तिसपर भी यह घोर दुःख कि ठीक विवाहके समय पतिका वियोग. अहो धिक्कार! इस इन्द्रजालसमान जगतके ख्यालको, जो मेरे प्रत्यक्ष दृष्टि गोचर हो रहा है. अब ऐसाही उपाय करूं जिससे आगामि ऐसी अवस्थाही प्राप्त न होय, किन्तु सांसारिक जन्म मरणसे रहितही होजाऊं." ऐसा विचार शीघ्रही उन्होंने अर्जिकाके व्रत धारण किये और अन्तमें समाधि मरणकर सोलहवें स्वर्गमें अच्युतेन्द्रकी महान् विभूति पाई. अहो! धन्य है उस स्त्रीरत्नको जिसने शरीररूप कीचड़से मोक्ष रत्न उत्पन्न किया. और सांसारिक सुखको कुछ भी न गिना इसीप्रकार जैनस्त्रियोंको भी वर्तना चाहिये. जिससे वे सच्चे सुखकी अधिकारिणी हों और उनका नाम भी लोकमें चिरकालतक स्थिर रहे.

जो स्त्रियां इस उत्कृष्ट जैनधर्म, उत्तम श्रावक कुल तथा धर्मोपदेश आदि सामग्रीको पाकर भी अपना कल्याण नहीं करतीं वे महामूर्खा अपने घर स्वयमेव आई लक्ष्मीको लात मार निकालतीं और अमृत छोड़ हलाहल विषपान करती हैं. जिसप्रकार मूर्खके हाथ चिन्तामणि रत्न आजावे और वह उसे कंकर समझ काग उड़ानेके हेतु फेंककर महान् दुखी हो. उसीप्रकार इस दुर्लभ साम-

श्रीको पाकर जो स्त्रियां अपनाहित नहीं करतीं वे अति मूर्खा और अभागिनी हैं. मानो वे अपने हाथोंसे नर्क जानेका मार्ग बनातीं हैं. जिस नर्कमें क्षणमात्र चैन नहीं, सागरोपम छेदन भेदन, मारन, ताड़न आदि नानाप्रकारके कष्ट भोगने पड़ते है जिन दुःखोंके चिन्तवन मात्रसे छाती फटती है. ऐसा समझ हमारी बहनोंको शास्त्रोंको अध्ययन अथवा श्रवणकर विचार पूर्वक पहिले कुगुरु, कुदेव, कुधर्मका समागम सर्वथा तजना योग्य है. क्योंकि प्रथम तो पूर्व संस्कारके बलसे संसारी जीव आपा भूल परपदार्थोंमें मदोन्मत्त हो रहे हैं तिसपर इनके सेवन करनेसे और भी मोहकी प्रबलता होकर अंधेकी नाईं दशा होजाती और आत्मकल्याणकी सुधि भी नहीं रहती.

इसके पश्चात् अभक्ष्य और अन्यायको छोड़ना ठीक है. जो बुद्धिमती स्त्रियां मिथ्यात्वको त्याग, रसोईकी सामग्री अपने हाथसे शोध, भलेप्रकार पानी छान यत्नाचार पूर्वक रसोई करती हैं और गृहस्थारंभके पापोंसे डरती हैं वे ही निष्पाप और साध्वी हैं क्योंकि गृहस्थीसम्बन्धी पाप स्त्रीके हिस्से और द्रव्योपार्जनका पाप पुरुषके माथे रहता है. जो स्त्रीपुरुष अपना कार्य प्रमाद और अज्ञानता पूर्वक करते है. वे अपने २ कर्मोंके फलको भोगते है. जिस घरमें स्त्री पुरुषका युगल (जोड़ा) ज्ञानी विवेकी हो. वह

मानो देवोंकी जोड़ी है. मनुष्य, देव और स्त्री, देवाङ्गना समान सुखी रहती हैं. घर देवमन्दिर और देश स्वर्गपुरी हैं किन्तु जहां इसके विपरीत कलह और अप्रेम है अर्थात् मूढ़, कलहप्रिय, अनपढ़ दम्पतिका जिस घरमें निवास है, वह घर नर्क समान और उसके वासी स्त्री-पुरुष श्वानादि पशुओंसे भी निकृष्ट हैं. कदाचित् कर्म-योगसे स्त्रीपुरुष दोनोंमें कोई एक अज्ञानी हो तो दूस-रेका कर्तव्य है कि उसे नानाप्रकारके मिष्ट उपदेश देकर मार्गपर लावे. क्योंकि संसारमें दम्पतिके समान मित्र और हितकारी दूसरा नहीं है. गृहस्थी रूपी गाड़ीके दोनों पहिये उत्तम होनेसे ही वह इच्छितस्थानपर जासक्ती है. जो स्त्रीपुरुष अथवा कुटुम्बी परस्पर आनंदपूर्वक नहीं रहते, वे वैरीके समान महादुखी और अविचारी निन्दाके पात्र हैं. जब उनको घर ही में साता नहीं तो वे विचारे परमार्थके लिये कैसे अपने चित्तको स्थिरकर धर्ममें लीन करसक्ते हैं. हमारा इस अध्याय द्वारा मुख्य-तयः कथन अपनी बहिनोंसे यही है कि हे भगनियो ! तुम्हारे ही कारण यह जैनजाति अशुद्ध खानपान और आचरणमें ग्रसी हुई मानी जारही है कि जिससे व्रत संयम पलना कठिन होरहा है. सो क्या यह बात तुम्हारे लिये शोभनीक है? तुमको तो यही उचित है कि आलस्य

छोड़ अपनी पर्याय सीता, दौपदी, अंजना, मंदोदरी, सत्यभामा, रुक्मणी, ब्राह्मी, सुन्दरी आदिकी भांति शील-रत्नसे विभूषितकर धर्ममें लीन हो सफल करो. जिस मिथ्यात्व, अन्याय और अभक्ष्यका व्यवहार तुम्हारे कारण गृहस्थीमें फैल रहा है उसको तत्कालही त्यागो. जब इनसे तुम्हारा सरासर लौकिक और पारलौकिक बिगाड़ होरहा है तो फिर इनका आदरही क्यों? प्यारी बहिनो! खेद यही है कि तुममें विद्या नहीं. यदि विद्या पढ़ी होतीं और जैनशास्त्रोंको अवलोकन करतीं व सुनतीं तो अच्छी तरह जानलेतीं कि पहिले स्त्रियां कैसी २ गुणवान होती थीं. एक कैकेई ही को लीजिये, जिसने स्वयंवरमें बड़े २ रूपवान राजपुत्रोंके बैठे हुए भी दरिद्र भेषमें छिपे हुए दशरथ रूपी पुरुषरत्नके गलेमें वरमाला डाल अपनी गुणज्ञता प्रगट कीथी. फिर अकेले दशरथको हजारों राजाओंके बीचमेंसे बचालेना कैकेईके सारथीपने (रथ हांकने) की विद्याका फल था. यदि मंदोदरी विदुषी और धर्मात्मा न होती तो कैसे अपने पति रावणको अन्याय कार्यसे बचनेकी शिक्षा देती. यदि अंजना सती धर्मात्मा और ज्ञानवान न होती तो कैसे विवाहके पश्चात ही अपने पतिको अपनेसे उदास देखकर २२ वर्षतक शीलवंती और पतिप्रेमसे भीगी हुई रहसक्ती थी?

साढ़े चौवीस सौ ही वर्ष वीते हैं कि राजाश्रेणिककी रानी चेलना कैसी धर्मज्ञा, पतिव्रता और विवेकिनी होगई है. जिसने अपने पतिको बौद्धसे जैनी बनाकर आत्महितके सन्मुख किया, जो नित्य शुद्ध भोजन बनाकर मुनिको आहार दानदे पश्चात् आप भोजन करती थी. ऐसा जान स्त्रियोंका यही परम कर्तव्य है कि इन उपर्युक्त गुणोंको धारणकर संसारमें सुयश और परलोकमें शुभगतिकी पात्र हों.

द्वितीय प्रकरण.

स्त्रीशिक्षा.

दोहा ।

ताड़न शिक्षण सुखमई, लाड़न है दुख मूल ॥
जो शिशुगण हित चहत हो, लाड़ करहु मनि भूल॥१॥

प्रगट रहे कि बालकोंके समान कन्याओंको भी बाल-अवस्थाहीसे शिक्षा देना अर्थात् पढ़ाना और गृहकार्योंका अभ्यास कराना माता पिताओंका परम कर्तव्य है. अपनी मातृभाषा तो अवश्य ही पढ़ाना चाहिये. जिनको मातृभाषाका भी भलीभांति ज्ञान नहीं है वे और क्या चतुराईके काम जान सक्ती हैं? इस देशकी

प्रधान मातृभाषा हिन्दीही है. जो इतनी शुद्ध और सरल है कि छोटासा बालक भी छः महीनेमें इसका पढ़ना लिखना सीखसक्ता है. अनेक जैनशास्त्रोंका भाषानुवाद भी इसी हिन्दीभाषामें है. पुत्रियोंको इतना पढ़ाया जावे कि जिससे वे धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र बांचने पढ़ने तथा समझनेके योग्य होजांय और काम पड़नेपर घरका हिसाब किताब भी लिख पढ़ सकें.

जो स्त्रियां पढ़ी लिखी होती हैं वे अपना समय अच्छी तरह व्यतीत करसक्तीं, सन्तानको उत्तम गुणवान बनासक्तीं और अपना लोक परलोक सुधार सक्ती हैं. जिसप्रकार कुम्हार कच्ची मिट्टी द्वारा मनोवांछित बर्तन बनासक्ता उसीप्रकार माता बचपनहीसे बालकोंके कोमल हृदयपर सुशिक्षा द्वारा ऐसा असर डाल सक्ती है कि जिससे वे भविष्यमें परोपकारी, विद्वान, शूरवीर और सद्गुणी होसक्ते हैं. छोटे २ बालकोंको जो शिक्षा हज़ार गुरू मिलकर नहीं देसक्ते वो सिर्फ माता ही अपने प्रियवचनों द्वारा सहज में देसक्ती है. जैसी शिक्षा माता देसक्ती है वैसी पिता नहीं देसक्ता, क्योंकि बालकोंका बाल्यकाल बहुधा माताहीके निकट व्यतीत होता है.

विद्या पढ़नेके अतिरिक्त गृहस्थी संबंधी कार्योंकी

शिक्षा भी पुत्रीके लिये माताहीको देना उचित है. यदि यहां कोई यह पूंछे कि बुहारने, पीसने, पानी छानने आदिके लिये शिक्षाकी क्या आवश्यक्ता है? यह कार्य तो हर कोई आदमी बिना सिखाये ही करसक्ता है. सो ऐसा समझना बड़ी भारी भूल है. मूर्ख आदमी जिस तरह एक छोटे कामको संपादन करनेके बदले हानि कर बैठता है उसी तरह स्त्रियां भी बिना सिखाये गृहस्थीके कार्यों में बे खबरी और गड़बड़ कर नुकसान करतीं और जीवोंकी हिंसा कर पापकी भागी बनती हैं. इसलिये उपर्युक्त बातोंकी शिक्षा पुत्रियोंके लिये अत्यावश्यक है. क्योंकि यह उनका सांसारिक मुख्य धर्म है. इस हीसे उनका सुख शांति पूर्वक निर्वाह होकर परमार्थ साधन होता है. जो पुत्रियां बचपनसे गृहस्थीके कार्य करनेका अभ्यास नहीं करतीं वे बड़ी होनेपर जब ससुराल जातीं और रसोई पानीका काम अच्छी तरह न करसकनेके कारण जी चुराती हैं तो घरके लोगों तथा पतिद्वारा सताई जाती हैं। कोई २ पुत्रियां सोचती होंगी कि हमारे माता पिता तथा सास ससुर लखपती,करोड़पती धनवान हैं इसलिये जब हमें ये काम करनाही नहीं, तो सीखनेकी क्या आवश्यक्ता है? उन्हें जानना चाहिये कि आज तो घरमें धन है इसलिये रसोइया आदि नौकर

चाकरोंसे काम लिया जाता है कलकी कौन जाने निर्धनता आजाय, क्योंकि कर्मोंकी विचित्र गति है हमेशा दिन एकसे नहीं रहते. लक्ष्मी छायाके समान सदा घटती बढ़ती रहती है तो फिर जिसने गृहकार्योंके करनेका अभ्यास न कर निठल्ला बैठना सीखा हो उसकी ऐसे संकटके समय क्या दशाहो? यातो भूखसे मरना पड़े या भीख मांगना पड़े. इसलिये हरएक बालिकाको उचित है कि गृहकार्योंके करनेकी रीति ज़रूर सीखे. हमारा कहना ये नहीं है कि धनवान होकर नौकर चाकर मत रक्खो और तुम्हीं मजदूरकी नाई गृहस्थीके सब काम करो. नहीं, जैसी तुह्मारी हालत हो उसीके माफिक काम करो. यदि पुन्यकर्मके उदयसे सम्पदा पाई है तो अच्छी तरह देखरेख रखकर नौकर चाकरोंसे यत्नाचार पूर्वक काम लो और आप अपने अवकाशके समयको स्वाध्याय या लिखने पढ़ने आदिमें लगाओ, जो स्त्री आप कभी कुछ काम नहीं करती और न करने की उत्तम रीति जानती है. वह नौकर चाकरोंसे भी बराबर यत्नाचार पूर्वक काम नहीं ले सक्ती और यह निश्चय रक्खो कि नौकर चाकर तो जिस तिस प्रकार काम पूरा करना चाहते हैं इसलिये बिना देखरेखके हरएक काम अधूरे रहजाते व बिगड़ जाते हैं. जो स्त्रियें रसोई की क्रियामें

निपुण हैं वे कुटुम्बियोंकी प्रकृति, देशकाल तथा ऋतुके अनुसार सदा शुद्ध रसोई तय्यार करती हैं जिससे कुटुम्बके लोग नीरोगी और सुखी रहते हैं. जो स्त्रियां पाकक्रियामें प्रवीण हरएक व्यंजन बनाना जानती हैं वे भोजन नहीं, किन्तु पुष्टकारी औषधि खिलाकर कुटुम्बको पुष्ट करती हैं ऐसीही स्त्रियोंको कुटम्बकी पालनपोषण करनेवाली माताकी उपमा कवियोंने दी है. सो ठीकही है जगतमें गुणही सर्वत्र पूज्यनीय है.

माता पिताका कर्तव्य है कि पुत्रियोंको भोजन क्रियाके सिवाय शिल्पकारी और कला कौशल्य अवश्य सिखावें. क्योंकि स्त्रियोंमें इस गुणका होना भी बहुत ज़रूरी है. जिन स्त्रियोंको सीना, परोना, कसीदा काढ़ना आता है वे मनमाना कपड़ा तय्यार करके आप पहिनतीं व अपने कुटुम्बियोंको पहिनाती हैं. इसलिये हरएक स्त्रीको अंगरखा, पायजामा, कुरता, कोट, चोगा, लहँगा चोली आदि कपड़ोंका कांटना, छांटना, सीलेना व कसीदा काढ़ना, वेलबूटा बनाना, इज़ारबन्द गूंथना गुलवंद, मोजा बनाना, गोखरू मोड़ना आदिकार्य अवश्यमेव सीखलेना चाहिये. बचपनसे इन शिल्पकार्योंका अभ्यास होजानेसे आगे बहुत लाभ और सुखकी प्राप्ति होसक्ती है. जो स्त्रियां अज्ञानता वश शिल्पकारी नहीं

सीखतीं उन्हें वक्त पड़नेपर आटा पीस, पानीभर व चरखा कातकर दोचार पैसे बड़ी कठिनतासे उत्पन्नकर अपना जीवन निर्वाह करना पड़ता है। यदि शिल्पकारी जानती हों तो नित्यप्रति रुपया आठ आना सहजमें पैदाकर गृहस्थीकी गुजर चलासक्ती हैं. इसलिये द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके अनुसार सब काम सीखलेना चाहिये ताकि वक्त पड़नेपर कोई काम अड़ा न रहे और न पराधीनता भोगनी पड़े.

जो सुशीला और भाग्यवती कन्यायें बाल्यकालसे खेल कूद छोड़ छोटे बड़े सभी अपने करने योग्य कामोंका अभ्यास करती हैं उनके सुखका कुछ ठिकाना नहीं. अवकाश मिलनेपर वे बेकाम नहीं बैठ रहतीं, उनका शरीर सदा फुर्तीला और निरोग रहता है. कन्याओंको बचपनसेही माता पितादि गुरुजनोंकी आज्ञा पालन करनेका अभ्यास डालना चाहिये. जो लोग लाड़ प्यार करके उन्हें ढीठ बना. हितकारी कामोंको न सिखा खेलकूदमें दिन बिताने देते हैं वे अपने सन्तानके हितकारी नहीं किन्तु बड़े शत्रु हैं. वे मूर्खता वश उनका जन्म बिगाड़ते और दुःखका भार गले बांध देते हैं. कन्याओंको भी उचित है कि सदा बड़ोंकी आज्ञामें चलें उनकी इच्छा विरुद्ध कोई काम न करें तथा जिससे अपने

माता पिता, सास श्वसुर, पति आदिकी हँसी व निन्दा हो ऐसे काम दूरहीसे छोड़ें.

हे प्यारी कन्याओं ! तुम नीच जाति तथा कुचलन चलनेवाली लड़कियोंके साथ हेल मेल, खेलकूद, मित्रता, संगति, बातचीतादि किसी प्रकारका संसर्ग भूल कर मत करो क्योंकि इससे बुद्धि बिगड़ जाती है नीतिका वाक्य है कि,—

दोहा.

संगति कीजे साधुकी, हरै कोट अपराध ।
संगति तजिये नीच की, आठों पहर उपाध ॥ १ ॥

इसवास्ते गुणवान की संगति करना श्रेष्ठ कहा गया है. नीतिमें कहा है—

श्लोक.

जाड्यं धियो हरति सिंचति वाचि सत्यं ।
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति ॥
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं ।
सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम् ॥ १ ॥

अर्थ—जिस सत्संगतिके प्रतापसे बुद्धिकी जड़ता नष्ट होजाती, सत्यभाषणमें रुचि होती, सन्मानकी वृद्धि होती, पाप दूर होकर चित्त प्रसन्न रहता और दशों दिशाओंमें सुकीर्ति फैलती है. ऐसे सत्संगकी महिमा कहांतक कही जाय.

अतएव पुत्रियोंको चाहिये कि प्रातःकाल उठ स्नान आदि क्रियाके पश्चात् भगवानके दर्शनकर रसोई आदिमे निवृत्त हो उत्तम जाति कुलकी सुशील बहू बेटियोंमें बैठ अच्छी बातचीत करनेमें दिन बितावें. जो स्त्रियां बिना विचारे कुसंगतिमें पड़जाती हैं उनको उसके बहुत कड़वे २ फल भोगने पड़ते हैं और जब उनपर एकवार कुसंगतिका प्रभाव पड़जाता है तो वे निर्लज्ज होजातीं, साराकुटुम्ब, सास, ननद, देवरानी, जिठानी, भुआ, मासी, नानी, दादी आदि अड़ौस पड़ौस वा गांवकी स्त्रियोंद्वारा निन्दा पातीं, कुत्ते बिल्लियोंकेसमान घरमें रह निरादरके साथ पेटभर दिन काटतीं और नाना प्रकारके कष्ट भोगती हैं.

इसलिये हे प्यारी भगनियों ! तुम अपनी हानि लाभका विचारकर, बुरी संगतिको त्याग, उत्तम स्त्रियों-के साथ रह गृहस्थीके छोटे मोटे सभी कामोंका अभ्यास करती रहो जिससे धर्म भी बना रहे, प्रशंसा भी हो, और सदा सुखी रहो.

इन उपर्युक्त गुणोंके साथ २ बालकाओंको धर्म शिक्षा का होना भी परमावश्यक है. उन्हें बचपनसेही हिन्दी लिखने पढ़ने समझनेके साथही साथ नमस्कार मंत्र दर्शन, मंगल, पूजन, पद, बीनती आदि अनेक पाठ और

लौकिक नीतिकी शिक्षा देना उचित है. जिसके अनुसार चलकर वे दोनों कुलोंकी कीर्ति फैलावें और किसी प्रकारके कुमार्गमें न प्रवर्तें. लोकोक्ति है कि पुत्री पराये घरका धन है अर्थात् कन्याका पालन पोषण तो माता पिता करते हैं पर विवाह होनेपर उसे दूसरे घर (ससुराल) रहना पड़ता है. इसलिये ससुरालमें इस तरह सुशीलताका बर्ताव करना चाहिये कि जिससे माता, पिता, भाई, भौजाई आदिकी प्रशंसाहो. जबतक पुत्रीका विवाह नहीं होता, माता पिता उसके अधिकारी और वह उनकी आज्ञाकारिणी है. इसलिये जो वर गुणवान, बलवान, कुलीन, सुन्दर और योग्यावस्थाका हो, उसके साथ पुत्रीका सम्बन्ध करना माता पिताका परम धर्म है. जो माता पिता बिना सोचे विचारे लोभके वशीभूत हो रुपये लेकर अपनी कन्याको मूर्ख, बुड्ढे, कुचाल, व्यसनी, रोगी, नपुंसक आदि दोषसंयुक्त पुरुषके साथ विवाह देते हैं. उनके समान नीच, पापी और कुघ्न नरकगामी इस संसारमें दूसरा नहीं है. भला जो पुत्री सब प्रकार हितकारी जान तुम्हारी आज्ञामें चलती है, जो बालकालसे बड़े लाड़ चावके साथ पाली गई और सब तरह तुम्हारे भरोसे है उसे इसतरह जन्मभरके लिये कसाईके खूंटे बांध दुःखमें डालना कैसी दुष्टता व निर्दयताका काम

है. जनक जननीको उचित है कि विवेकपूर्वक लड़कीका योग्य और गुणवान वरके साथ विवाह करें. ऐसा न होना चाहिये कि पुत्री तो जन्मभर दरिद्रता व विधवापनेका दुःख भोगे और जातिवाले शादीमें खूब माल उड़ावें, आप हजार पांचसौ रुपये लेकर अन्यायी बनें. धिक्कार है उन पुरुषोंको जो अविवेकतापूर्वक ऐसे नीच काम करते हैं और हजार २ धिक्कार है उन जिह्वा लंपटी जातिवालोंको जो जान बूझकर ऐसे अनमेल विवाह कराके जाति और धर्मकी अवनति करते हैं. उत्तम पुरुष तो कन्याके द्रव्य लेनेका स्वप्न भी नहीं देखते यहांतक कि ऐसे पुरुषोंके पास भी नहीं बैठते. इसप्रकार माता पिताके द्वारा उत्तम और योग्य वरको दान किई हुई कन्या स्त्री कहलाती है. उसे चाहिये कि छायाके समान पतिकी अनुगामिनी रहे, पति ही को अपना सर्वस्व जाने और सास, ससुर, ननद, देवर, जेठ, देवरानी, जिठानी आदि घरके कुटुम्बियोंकी सेवा, आदर, सत्कार और विनय यथायोग्य करे. सबकी शरम करे, किसीसे कलह, लड़ाई आदि भूलकर भी न करे. यदि किसी कारणसे वे अपने साथ अच्छा बर्ताव न करें तौभी आप शान्तता और धीरजसे उनके साथ मेलमिलाप और विनयका वर्ताव रक्खे. क्योंकि सहनशीलता न होनेसे घरमें

झगड़ा होकर नित्य नये २ दुःख पैदा होते हैं. और यह निश्चय रहे कि जिस घरमें रातादिन झगड़ा रहता है वह घर नरकके तुल्य नानाप्रकारके क्लेशोंका स्थान है. इसलिये जिन कारणोंसे गृहस्थीमें कलह व फूट उत्पन्न होती हो उनको दूरहीसे तजें.

स्त्रियोंको पतिव्रत धर्म पालन करना सर्वोत्तम कार्य है. पतिपरायण, पतिकी सेवामें दक्ष, पतिकी इच्छानुसार काम करनेवाली, धर्मनिष्ठा, सती, लक्ष्मी महिलाओंकी कीर्तिसे आजतक भारतवर्ष जगतमें जगमगा रहा है. जिसतरह मोतीमें आब होती है वैसाही स्त्रियोंके लिये पतिव्रत धर्म आभूषण है. धन्य है उन सतियोंको जो अपने पतिव्रत धर्मको निर्दोष रीतिसे पालन करती हैं. देखो उस पतिव्रता सीताको * जो अपने पतिकी अनुगामिनी होकर वनको गई, रावणके बन्दीगृहमें रहकर अति क्लेश भोगनेपर भी जिसने अपने शील रत्नकी रक्षा की और उसीकी परीक्षाके निमित्त अग्नि-कुंडमें प्रवेश किया. परंतु धन्य रे है उसके निर्दोष शीलधर्मको जिसके प्रभावसे देवोंने उस अग्निकुंडको सरोवर बनाकर सीताका सुयश चिरकालके लिये संसारमें फैलादिया. क्या सीताके समान सती फिर जगतमें पैदा होसक्ती

* सीता, अंजनाका चरित्र श्रीपद्मपुराणमें देखो.

हैं ? क्या वर्तमानकालकी स्त्रियोंमें कोई स्त्रीरत्न अपने वक्षस्थलपर हाथ रखकर यह कहसक्ती है कि कर्मयोगसे कदाचित् उसपर सीता सरीखी विपत्ति आ पड़े तो वह अपने पतिव्रत धर्मकी रक्षा भले प्रकार करनेको समर्थ हो सक्ती है. मैनासुन्दरी सरीखी परम पतिव्रत धर्म पालनेवाली स्त्री सराहने योग्य है जिसने अपने पतिव्रतधर्मके प्रभावसे कुष्ठीपति श्रीपाल तथा उसके अंग रक्षक ७०० योद्धाओंका कुष्ट रोग नाशकर उनको निरोगी किया. पतिव्रता अंजना सतीने अपने पति पवनंजयके तिरस्कार सहित त्याग करनेपर बाईस वर्ष पर्यंत स्नेह और स्वधर्म अटल रक्खा और अन्तको अपने पतिकी प्यारी बनी. दर्शनकथामें लिखाहै कि सेठ बुद्धिसेन की स्त्री अपने पतिकी आज्ञानुसार पिताके घरपर सब आभूषण उतार उसके साथ विदेश चली गई, किन्तु वर्तमान कालकी स्त्रियोंकी नाई आभूषणकी परवाह न की और पतिआज्ञाको शिरोधार्य किया. इसके विरुद्ध आजकलकी स्त्रियें पतिको गहनोंके लिये इतना तंग करती हैं कि जिससे उसकी नाको दम आजाता है. और बेचारेकी बुरी हालत होजाती है. राजा हरिश्चंद्रकी पतिव्रतारानी ताराको धन्य है जो अपने पतिके सत्यव्रत रखनेको चंडालकी नौकरी करनेके लिये तय्यार हुई.

राणी चेलनाके समान कौन बुद्धिमती होगी जिसने अपने पति राजाश्रेणिकको बौद्धधर्मीसे जैनी बनाकर आत्मकल्याणके सन्मुख किया. शीलव्रतके प्रभावसे सुखानन्दकुमारकी स्त्री मनोरमाकी देवोंने रक्षा की. इसप्रकार सैकड़ों हजारों पतिव्रता स्त्रियोंका वृत्तान्त शास्त्रोंमें लिखा है जिससे यही सिद्ध होता है कि स्त्रियोंके सब धर्मोंमें श्रेष्ठ एक पतिव्रत धर्म है. पतिके सिवाय अन्य पुरुषोंको उनकी अवस्थानुसार पिता, भाई और पुत्र सदृश समझकर यथायोग्य वर्ताव करना चाहिये. पतिव्रत धर्मकी महिमा शास्त्रोंमें इसप्रकार वर्णन की गई है.

श्लोक.

तोयत्यग्निरपि स्रजत्यहिरपि व्याघ्रोऽपि सारङ्गति
व्यालोऽप्यश्वति पर्वतोऽप्युपलति क्ष्वेडोपि पीयूषति ॥
विघ्नोऽप्युत्सवति प्रियत्यरिरपि क्रीड़ातड़ागत्यपां-
नाथोऽपि स्वगृहत्यटव्यपि नृणां शीलप्रभावाद्ध्रुवम् ॥१॥

अर्थ–शीलके प्रभावसे अग्नि जलसमान, सांप माला समान, सिंह मृग समान, कुटिल हस्ती घोड़े समान, विष अमृत समान, शत्रु मित्र समान, समुद्र छोटे कुंड समान और भयंकर बन बगीचेके समान होजाता है. इत्यादि शीलकी प्रशंसा कहांतक कीजाय. जो स्त्रियां

बाल्यकालसेही शीलधर्मकी रक्षा करती हैं उनके घर कभी कोई दुख आदि नहीं होता और न कोई भूत प्रेतादिक व्यंतर देवोंका आक्षेप होता है. उनकी संतान रूपवान, बलवान, धार्मिक और आज्ञाकारिणी होती है. शील बिना धर्मके और सब अंग निष्फल हैं. जो मूर्ख तथा कुसङ्गमें रहनेवाली स्त्रियां धर्मकी महिमा नहीं समझतीं और अपनी इज्जतमें व्यर्थही बट्टा लगाती हैं वे व्यभिचारिणी, परपुरुष गामिनी, पापिनी, महानिंद्य, कूकरी, शूकरी समान मुंह देखने योग्य नहीं. जो ऐसी स्त्रियोंसे वार्तालाप मात्रही करते वा उनका बनाया, स्पर्शा भोजन करते हैं उनका चित्त मलीन और कलुषित होजाता है. व्यभिचारीके जप, तप, तीर्थ, व्रत, पूजा दानादि सब निष्फल होते हैं. ऐसा विचार व्यभिचारको (सर्व प्रकार) दूर ही से तजो और शील व्रतको तन मनसे निरतीचार पालो जिससे तुम सांसारिक सुखोंके अतिरिक्त मोक्ष सुखकी अधिकारिणी हो जाओ ॥

शीलगुणके साथही साथ स्त्रियोंको शान्ति स्वभावी और विनयवती होना आवश्यक है. बुद्धिमती स्त्री वही है जो अपने सुस्वभावके कारण सब कुटुम्बको प्रिय होती है. उनको चाहिये कि ससुरको पिताके समान, सासको माताके समान, इसीप्रकार अन्य कुटुम्बीजनों

को यथायोग्य आदर, स्नेह और विनयकी दृष्टिसे देखें. सबसे प्यारसे बोलें और उनकी उचित आज्ञाओं को भूलकर भी न टालें. स्त्रीको विचारने की बातहै कि हमारे पतिके बचपन मे ही सास, ससुर, यह बात विचार कर खुशी होते कि वहू आकर घरका सब काम संभाल लेगी. और हमारी सेवा करेगी. इसी उद्देश्यसे उन्होंने तन, मन, धन संबंधी नाना कष्ट भोगकर भी तुम्हारे पतिकी सेवा किई है. उनको यही आशा थी कि ये हमारे बुढ़ापे में काम आवेंगे, इसलिये अब इस गिरती अवस्थामें उनकी सेवाका पल्टा देने और उनकी नैया पार लगाने का अवसर तुह्मारे हाथ आया है. तुह्मारा बड़ा सौभाग्य है कि सास, ससुर आदि गुरुजनोंके कारण तुह्मारी गृहस्थी शोभायमान होरही है. इसलिये सदा हर्षपूर्वक उनकी सेवा करो जिससे उनका मन किंचित् भी दुखी न होने पावे.

जो स्त्रियां दुष्ट स्वभावके कारण अपने गुरुजनोंकी सेवा नहीं करतीं, वृद्ध अवस्थामें काम न करसकने के कारण उनका निरादर करतीं, कठोर वचन कहतीं, गालियां देतीं, दुतकारतीं, बहुत परिश्रमका काम लेतीं, पेटभर खानेको नहीं देतीं, आप अच्छा खातीं और उन्हें रूखासूखा खिलातीं तथा हरप्रकार रुपये, पैसे,

कपड़े, भोजन आदिसे तंग करती हैं वे कर्कशा, चंडालिनी, महापापिनी दुष्टा हैं. उनका बड़ा दुर्भाग्य है जो ऐसे अवसरको व्यर्थ खोतीं और पुण्यके स्थानपर पापका भार लादती हैं, ऐसी स्त्रियां वृद्ध होनेपर अपनी बहूबेटियोंद्वारा नाना प्रकार तिरस्कार और दुख पातीं, प्रायः निस्संतान होतीं और एक न एक आपत्तितो उनके पीछे लगीही रहती है ऐसा जान प्रत्येक स्त्रीको इस रीतिसे बर्तना चाहिये कि जिससे कुटुम्बमें सुख सम्पति और आनंद बढ़े.

इसके सिवाय अपने पूजनीय पतिकी आज्ञाकारिणी और उसके सुख दुखमें साथ रहनेवाली भी स्त्री को होना योग्य है. जिस समय पति घरमें आवे और आप कोई काम न करती हो, तो आगन्तुक पतिके सन्मुख खड़ी होजाना, यदि कुछ काम करती हो तो आदर सहित कोमल बचन बोलना, सुख दुखकी बात पूंछना, पतिके सन्मुख आप कभी उच्च आसनपर न बैठना. यदि किसी कारणसे पति नाराज़ भी हो तौ भी आपको शान्तिता धारण करना चाहिये. क्योंकि ऐसा न होनेसे कलह और भी बढ़जाता है. जब पतिका क्रोध ठंडा होजाय तब नम्रतापूर्वक ठीक २ बात समझावे और अपने अपराधकी क्षमा मांगे. तथा भोजन वा अन्य आवश्यक

कार्य करते समय अथवा चार आदमियोंके पास बैठे, बातचीत करते हुए आप किसी वस्तुके मंगानेका तकाजा न करे, न किसी दूसरेके हाथ करावे. यदि घरमें किसी चीज़की ज़रूरत हो, तो अवसर देखकर नम्रतापूर्वक मिष्टवचनद्वारा कहे, इत्यादि प्रत्येक बर्ताव बहुत योग्यतापूर्वक करे जिससे पतिका चित्त प्रसन्न और संतोषित रहे. यदि घरमें स्त्रीरूपी यथार्थ लक्ष्मी हो तो पति बाहिर से कैसा भी दुखी क्यों न आवे. घरपर आतेही शान्त-चित्त और प्रफुल्लित होजाता है. जो स्त्री अपने पतिके सुखमें सुखी और दुखमें दुखी तथा अपना प्राणवल्लभ समझ उसकी सेवामें तत्पर रहती है वही कुलकी शोभा बढ़ाने वाली लक्ष्मी पतिव्रता और सती है. यदि पतिको किसी व्यापारमें हानि हुई हो या कोई दैवी आपत्ति आगई हो तो वस्त्राभूषणका लोभ न करके यथाशक्ति उसकी इज्जत बचावे, अपने घरकी वार्ता भूलकर भी बाहिर प्रकाशित न करे. घरमें से कोई चीज छिपाके न बेचे न कोईको देवे, सदा अपनी गृहस्थी सम्बन्धी हानि लाभका बिचार रक्खे. क्योंकि यह नियम है कि पति चाहे कितनाही धन कमाकर क्यों न लावे और स्त्री सावधानी पूर्वक उसकी रक्षा न करे तो कदापि बरकत नहीं होती. क्योंकि गृहस्थीका भार व संभाल स्त्रीके आधीन

है. पति तो केवल द्रव्योपार्जन करनेवाला है. उस द्रव्यका उत्तम रीतिसे खर्च करना व शेषको रक्षित रखना स्त्रीकी योग्यतापर निर्भर है. यदि अभाग्यतावश किसी स्त्रीको पापी, कुचलन, धर्मविरोधी, आलसी, ज्वारी, चोर, व्यसनी, व्यभिचारी, रोगी आदि अवगुण सहित पति मिले तो उसे शक्ति भर जिसतिस उपायसे सुमार्गपर लावे व धर्ममें रुचि करानेका उपाय करे. इसके समान संसारमें दूसरा हित नहीं है. यह उपकार सिवाय ज्ञानवान धर्मात्मास्त्रीके और कौन करसक्ता है? स्त्रियोंको थोड़ी बहुत वैद्यक विद्या जानना भी आवश्यक है. क्योंकि जो स्त्रियें इस विषयमें कुछ भी नहीं जानतीं वे अपनी और अपने संतानकी रोगसे रक्षा नहीं करसक्तीं. इसलिये इस स्थानपर कुछ बातें उनके ध्यान देने योग्य लिखी जाती हैं.

(१) गर्मी–शरीरमें अधिक तापके लगनेसे हृदय शुष्क होकर मूर्खता, दुर्बलता आदि नाना प्रकारके रोग उत्पन्न होजाते हैं इसीकारण रुधिर चलनेकी क्रिया बंद होनेसे शरीर क्षीण और दुर्बल होकर लौकिक, पारलौकिक कार्योंके करने योग्य नहीं रहता. अतएव अधिक गर्मीसे हमेशा बचते रहना चाहिये.

(२) सर्दी–सर्दीके लगनेसे ज्वर, बात, शरीरमें दर्द, पेटमें पीड़ा, इत्यादि रोग उत्पन्न होते हैं गर्मदेशके रहनेवाले आदमियोंको बहुधा अधिक सर्दी होजाती है. इसका कारण यही है कि गर्मीसे वह लोग अधीर हो शरीरको असमयमें ठंड लगादेते हैं जैसे अधिक परिश्रम करके आना और झटपट कपड़े उतार डालना, परिश्रम तो अधिक करना और बिना विश्राम लिये ही ठंडा जल पीलेना, रात्रिको ओस पड़नेकी जगह सोना, सोते समय अधिक ठंड लगने देना, वर्षाकालमें शरीरको हवा लगाना, वस्त्रोंका न पहिरना आदि कारणोंसे सर्दी बढ़कर शरीरमें नाना प्रकारके दुखदाई रोग होजाते हैं इसलिये सर्दीके कारणोंको रोकनेका ध्यान रखना योग्य है.

(३) पीनेका जल–जीवनधारण करनेके लिये जल एक मुख्य पदार्थ है. बहती हुई नदी और कुएका जल साफ होता है, जलको सदा छानकर पीओ जिससे कूड़ा कचरा, जीवजन्तु आदि पीनेमें न आवें, जलके पात्रोंको सदा ढँके रक्खो, पाखानेसे आकर कभी पानी मत पियो, भोजन करते समय भी अपनी तासीरके अनुसार पानी पीना चाहिये जिससे पचन क्रिया अच्छी हो, निराहार अथवा खड़े होकर वा गर्मीमेंसे आकर एकदम पानी पीलेनेसे शरीरमें तिल्लीका बढ़ना आदि अनेक

प्राणहारक रोग होजाते हैं अतएव पानीकी अशुद्धता और मैलेपनसे बचना चाहिये.

(४) भोजन—यह मनुष्यका जीवनाधार है इसलिये इसपर विशेष ध्यान देना चाहिये. भोजनका स्थान स्वच्छ, सामग्री ताजी और साफ हो, ऋतुके अनुसार भोजन सामग्रीमें परिवर्तन होना चाहिये. भोजन उपरान्त स्नान करना रोगका घर, और परिश्रम करना नीरोगताकी जड़ है. परिश्रम करनेसे पाचनशक्ति बढ़कर शरीर बलिष्ठ होता है, कच्चा और बासी भोजन खानेसे पाचनशक्ति घटकर पेटमें अनेक दर्द होते हैं. भोजन सर्वदा स्नान करके और भूख लगने परही भली भांति चबा २ कर खाना योग्य है.

(५) निद्रा—दिनभरके परिश्रमकी थकावटको उपशांत करनेके लिये विश्राम लेनेको निद्रा कहते हैं. ठीक २ निद्रा आनेसे सब प्रकारके रोग उपशांत होजाते हैं. रात्रिमें अधिक जागने और बराबर निद्रा न आनेसे शरीर अकड़ने लगता, देह टूटती, आलस्य आता, काम करनेमें चित्त नहीं लगता, इसलिये योग्यरीतिसे निद्रा लेना अवश्य है, सर्दीके स्थानमें वा बिना ओढ़े सोना हानिकारक और प्रातःकाल निद्रा त्यागना बहुत लाभकारी है.

(६) व्यायाम याने कसरत—अंग प्रत्यंगको चलाये बिना शरीरमें फुरती नहीं आती, जो लोग हेमेशा अपने छोटे बच्चोंको गोदीमें लिये रहते हैं और जमीनपर लिटाकर हाथ पांव चलानेका मौका नहीं देते, वे मानों उनको जान बूझकर बीमार करते हैं. क्योंकि शरीरमें आलस्य रहनेसे नवीन रक्त पैदा नहीं होता. स्त्रियें पुरुषोंकी तरह कसरत तो कर नहीं सक्तीं इसलिये घरका काम धंधा करनाही उनके लिये कसरत है. जो स्त्रियां अपने को धनवान जानकर अथवा बड़प्पन बतानेके लिये घरका काम काज नहीं करतीं और सदा आलसी होकर खाटके नीचे पांव भी नहीं देतीं वे अकसर बीमार रहती और बहुधा कम उमर जीती हैं. इसीलिये जो समझदार स्त्रियाँ हैं वे अपने गृहकार्योंको निरालस्य होकर करतीं और सदा हृष्ट पुष्ट और चंगी रहकर लौकिक और पारलौकिक सुख भोगती हैं. इत्यादि उपर्युक्त बातोंके सिवाय छोटी मोटी बीमारीकी औषधियोंका जानना भी स्त्रियोंके लिये बहुत लाभकारी है. क्योंकि बालकोंको छुटपनमें बहुधा अनेक प्रकारके छोटे २ रोग खांसी, दस्त, ज्वर आदि होजाया करते हैं. जो माता उचित औषधि नहीं जानती और अनजान होती है वह मूर्ख धूर्तोंकी बहकावटमें आकर भूत, व्यंतर, शीतला,

प्रेत, पितर, डांकनी, शाकनी, नजर, मोरा आदि ढोंगोंमें पड़कर अपनी संतानसे हाथ धो बैठती है. इसलिये यहांपर कुछ मामूली रोगोंकी पहचान और औषधियें लिखी जाती हैं.

सांसकी पहिचान जब सांस लेते समय बालककी नाकसे सुर जल्दी २ चलकर फैलता हो तो जानलो कि इसकी छातीमें दर्द है. छातीमें दर्द होनेसे आंखें पथराने लगतीं, स्वास लेनेमें पीड़ा होती, पेट फूलजाता, होंठ पीले पड़जाने, मुंह लाल और सफेद पड़जाता है. ऐसी अवस्थामें न घबराकर धीरता पूर्वक योग्य हकीम वैद्यसे बड़ी सावधानीसे इलाज कराना चाहिये.

आंखोंकी पहिचान–जब शरीरकी हालत अच्छी होतीहै तो आंखें साफ रहती हैं. जब त्योरी बदले वा आंख मैली रहे तो जानना चाहिये कि बच्चेके सिरमें बीमारी होनेवाली है.

नींदका न आना–बालकको जब नींद ठीक २ नहीं आवे तब जानना चाहिये कि उसका स्वास्थ्य बिगड़ा हुआ है. इसीप्रकार जब बालक मामूलीसे ज्यादह रोवे तो जानना कि ये बीमार पड़नेवाला है.

खांसना–बालकको जब शर्दी होती है तब वह बार २ खांसता है. आवाज़ बैठ जाती है. खांसनेसे कभी २ पसली भी चल निकलती है.

माता या चेचक-बच्चोंको चेचक निकलनेके पहिले टीका लगवाना याने गुदवाना जरूर है. जो लोग लाड़ प्यार और मूर्खता वश टीका नहीं लगवाते वे पीछे पछताते हैं. माता निकलनेके दोतीन दिन पहिलेसे ज्वर आता है, दिलपर घबड़ाहट और बेहोशी होती है, तीसरे दिन बदन लाल पड़जाता और माथेपर खस खस के बराबर छोटे २ दाने दिखाई देते हैं. यह दशा टीका लगानेके पीछे जो चेचक शायद निकले तो उसकी है. यदि टीका न लगाया गया हो तो चेचक बहुत जोरसे निकलता है. मूर्ख स्त्रियां इसका असली मतलब न समझकर शीतला नामा देवीका कोपजान उसकी पूजा, अर्चा, बंदना करनेको दौड़ती हैं. परंतु यह नहीं जानती कि माताके पेटकी गर्मी जो पुत्रके शरीरमें होती वह कारण पाकर इसप्रकार निकलती है इसलिये इसका नाम माताकी बीमारि है और तर तथा शीतल भोजनादि उपचार करनेसे ये जल्द सहलरीतिसे आराम होती है इसलिये यह शीतला कहाती है. जो समझदार स्त्रियें हैं वे मिथ्या दौड़ धूपमें न पड़कर ठीक २ उपाय करतीं जिससे यह रोग शीघ्र शान्त होजाता है.

यदि बालककी डूठी पकजाय तो दीवेका तेल लगावे या हल्दी, लोद और नीमके फूल बारीक पीसकर लेप-

करे. यदि बालक दूध न पीता हो तो पहिले यह जानना आवश्यक है कि किस पीड़ासे दूध पीना बन्द हुआ है. जिस अंगपर बालक वार २ हाथ फेरता हो, उसी स्थानपर दर्द समझकर उसका योग्य इलाज शीघ्र करना चाहिये. यदि हँसली चलगई हो तो दाईको बुलाकर मलवा देनेसे आराम होजाती है. यदि कागला बढ़गया हो तो चूल्हेकी राख और काली मिरच पीसकर अंगुलीपर लगा चतुराईके साथ उसे दबा देवे.

कभी २ बालककी आंखें गर्मी, सर्दी और दांत निकलनेके सबब दुखने लगती हैं. इसलिये रसोतको पानीमें घिसकर उसका लेप बालककी आंखोंपर करे और भीतर भी एक बूंद डालदे अथवा पीली मिट्टीकी टिकियें बनाकर घड़े पर रखदे और रातको सोने समय आंखपर बांधदे इस रीतिसे आंखोंका दुखना शीघ्र आराम होजाता है. परंतु दांतोंके कारण आई हुई आंखें जबतक कि दांत न निकल आवें तबतक आराम नहीं होतीं.

यदि बालकको खांसी होजाय तो अनारका छिलका सोते वक्त मुंहमें दबावे वा बहेड़ेको भूभलमें भूनकर उसकी राख बालकको चटावे. अगर बालकको पेशाबके साथ खून आता हो तो पाषाणभेद और साठा पानीमें पीसकर पिलावे. अगर दस्तमें आँव आती हो तो वाय-

विडंग, पीपल, अजमोद, कुडकुडेके बीज और सफेद जीरा पानीमें पीस मिश्री मिलाकर पीनेको दे. यदि आँव खूनके साथ आती हो तो कच्ची पक्की सौंफ पीसकर उसमें कच्चीखांड मिलाकर चूरणकी भांति खानेको देवे या सोंठका मुरब्बा खिलावे. यदि बालकको ज्वर आता हो तो ऐसी दवा देना चाहिये जिससे कुछ दस्त होकर पेटमेंका विकार निकल जावे.

दांतोंके सहज रीतिसे निकलनेका यह उपाय है कि धावड़ेके फूल और पीपलको आंवलेके रसमें मिलाकर बच्चेके मसूडोंपर मले. यदि पेशाब बंद होगई हो तो टेसूके फूलोंको बालकके पेडूपर लेप करदे. जहांतक होसके बालकोंको जल्दी पचनेवाला ताजा भोजन देना चाहिये जिससे ये निरोग रहें. यदि कोई रोगभी होजाय तो धैर्यता पूर्वक आपही व अच्छे वैद्यद्वारा दवाई करे क्योंकि मूर्खता वश अधैर्य होने और ढोंगी धूर्तोंकी बहकावटमें आकर मंत्र जंत्र करानेसे रोग उपशांत न होकर कभी २ बड़ी हानि उठाना पड़ती है. इसलिये हरएक बातका असली मतलब समझनेके लिये पढ़ लिखकर उत्तम २ पुस्तकोंका अवलोकन वा शास्त्र स्वाध्याय करना अवश्य है. जिससे सांसारिक सुखोंके उपरान्त पारमार्थिक सुखोंकी प्राप्ति हो.

तृतीय प्रकरण.

स्त्रियोंकी नित्य चर्य्या.

दोहा।

गृहस्थी श्रावककी क्रिया, चहिये यत्नाचार।
ताकौ वर्णन करत कछु, निरखि श्रावकाचार ॥ १ ॥
जल छानन, तजि निशि असन, श्रावक चिन्हजु तीन।
प्रति दिन जो दर्शन करै, सो जैनी परवीन ॥ २ ॥

स्त्रियोंको उचित है कि प्रातःकाल सूर्योदयके पूर्व अपने पतिसे पहिले शय्यासे उठ, पंचपरमेष्ठीका स्मरण करें, बिस्तरोंको संभाल यथास्थान रख मलमूत्र आदि बाधाओंसे निश्चिन्त होवें. अनेक स्त्रियां आलस्य तथा प्रमादके वश बहुत दिन चढ़े उठतीं और बिस्तरोंको ज्योंके त्यों छोड़ जिस तिस प्रकार शारीरिक क्रियाकर घरके काम काज में लग जाती हैं. यह अति अज्ञानता का कार्य है. स्त्रियोंका यही धर्म है कि पतिके पीछे सोवें और पहिले उठें. जंगल अर्थात गांव बाहिर दीर्घबाधा को जाना आरोग्यता और अहिंसाका कार्य है. बहिर्भूमि (दीर्घशंका) को कपड़े बदलकर जाना चाहिये. क्योंकि अपवित्र स्थान व हाथोंके स्पर्श होजानेका संदेह रहता है.

शौचादिकका पानी छना हुआ होना चाहिये. जो बर्तन शौच करनेका हो, उसको अन्य कामोंमें न लावे, शौचके निमित्त जितना पानी आवश्यक हो, तितनाही लेना चाहिये बहुतसे लोग जल कायके जीवोंकी हिंसाके ख्यालसे इतना थोड़ा पानी शौचके वास्ते लेते हैं कि जिससे अपवित्रता ज्योंकी त्यों बनी रहती है. ध्यान रखनेकी बात है कि गृहस्थीके लिये थावर कायकी सर्वथा हिंसाका त्याग करना अशक्यानुष्ठान है, और यह भी न चाहिये कि व्यर्थही थावर कायकी हिंसा कीजाय. लोग यथार्थ बात-को न समझकर भ्रष्टाचारी मूर्खोंके बहकानेसे भ्रष्ट होते चले जाते हैं, यहांतककि पाखानेका लोटा भी घरके बर्तनोंमें मिलादेते हैं. सो यह बाततो उच्चकुलकी बद-नामीकी है. बाह्य पवित्रता, अंतरंग पवित्रताका कारण होनेसेही सकल आरंभ परिग्रहके त्यागी साधुभी शौचके लिये कमंडल रखते हैं, तो गृहस्थको अपने पदस्थके विरुद्ध त्रस हिंसाका खयाल न करके और थावर हिंसाके ऊपर आरूढ हो इसप्रकार भ्रष्टता करना सर्वथा लोक और धर्मके विरुद्ध है. शौचके अन्तमें अधोस्थानको प्राशुक और शुद्ध मृत्तिका या भस्मसे धोकर शुद्ध करना भी उचित है. इसीप्रकार लघुशंकाके पीछे इंद्री व हाथ पांव धोना जरूर है.

इसप्रकार बाधाओंसे निपटने पीछे घरको कोमल बुहारीसे बुहार रात्रिमें विचरते हुए आगन्तुक जीवोंको यत्नाचार पूर्वक एकत्रकर सुरक्षित स्थानमें क्षेपण करदेना चाहिये. बहुतसी निर्दयी मूर्ख स्त्रियां खजूरकी कांटेदार बुहारीसे फटकार २ कर असंख्यजीवोंका प्राण-नाश करडालती हैं. और यह नही विचारतीं कि यदि इसीप्रकार उनके शरीरमें कांटा चुभा दियाजाय तो उनकी क्या दशा हो? सदैव बुहारीको फाड़कर या अंबाड़ीकी बुहारीसे बुहारकर विचारे दीन अनाथ जीवोंकी रक्षा करना यही मनुष्यमात्रका दयामय परम धर्म है. इसप्रकार गृहके ऊपरी काम करने बाद शुद्ध छने हुए प्रमाणिक जलसे स्नान करना चाहिये. वर्तमानमें बहुतसे दरिद्री स्त्रीपुरुष गृहस्थीके विषयादिक सेवन, लघुशंका, दीर्घशंका, आदि अनेक त्रस हिंसाके कार्य करते हुए भी भ्रष्टाचार्योंके बहकानेसे मूर्खतावश एकेन्द्रीकी हिंसाके बहाने स्नान, दंत धोवन तक नहीं करते सो यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि भोजन तो करना और पानी नहीं पीना. हरएक मनुष्यको अपने पदस्थके अनुसार काम करना चाहिये. हां अनछाने जलको बर्तना योग्य नहीं. जो एक बूंद भी बिनाछने जलकी काममें लाते हैं वे धीमर और कसाइयोंसे भी बढ़कर

हिंसक हैं कसाई तो प्रयोजन वश नित्य एक दो जीव मारता है परंतु ये बिना कारणही असंख्य जीवोंकी नित्य हिंसा करते हैं. जल छाननेकी आज्ञातो अन्यधर्मोंमें भी पाई जाती है. *

इसप्रकार स्नानकर पवित्र हो अपने देशका बना हुआ मोटा या पतला अपनी योग्यतानुसार अल्प या बहुमूल्यका शुद्ध और उज्वल वस्त्र पहिन, बड़े उत्साहके साथ कुछ प्रासुकद्रव्य लवंग, बादाम, चांवल आदि लेकर दर्शन करनेके लिये जिनभवनको जाना चाहिये. जिसग्राममें जिनमन्दिर नहीं उसमें जैनीको वास करना सर्वथा अनुचित है. यदि यात्रा आदि देशाटनके समय दर्शन न मिलें तो अशुभोदयविचार एक रस छोड़ भोजन करे, जो पुरुष ग्राममें जिन मंदिरके होते हुए भी दर्शन, पूजन द्वारा पुण्य उपार्जनकर आत्महित नहीं करते, उनके समान निकृष्ट, पापी और अभागी कौन है ? जो बिना प्रयत्न हाथमें आये हुए रत्नको निष्कारण समुद्रमें फेंकते हैं. ऐसे मूढ़ और अविवेकी पुरुष तिर्यंचोंसे भी बद्तर हैं इसलिये प्रत्येक मनुष्यको उचित है कि दर्शन करने पीछे भोजन करनेकी दृढ प्रतिज्ञा ले. इसप्रकार मनमें

---

* वस्त्रपूत जल पिबेत् (स्मृति)

अति हर्षधार मन्दगतिसे देखता हुआ जिनालयको जाय, मार्गमें कीड़ी, मकोडी, मल, मूत्र आदिसे बचकर चलै, जिससे जीवोंकी रक्षाके साथ २ अपनी रक्षा और पवित्रता रहे. स्नान करके पवित्र हो चर्मके जूते पहिन मन्दिर जाना अतिनिंद्य और धर्मविरुद्ध है. जूता न पहिनकर मन्दिर जानेसे कई लाभ भी हैं. जीवोंकी रक्षा होती, लोग इनको बिना जूता पहिने देख मन्दिरको जाते हुए जान कोई दुनियादारीकी बातचीत नहीं करते, मंदिरमें भीतर जानेपर जूतोंकी फिकर नहीं रहती, इसलिये जूता पहिनकर दर्शनोंके जानेकी कुपद्धति सर्वथा तजना योग्य है. मन्दिरमें प्रवेश करनेके पहिले ही पगोंको खूब धोकर साफ करे और सर्वप्रकारकी उद्धतता व संकल्प विकल्पको छोड़कर जिनेन्द्र देवकी भक्तिका प्रेरा हुआ रोम २ हुलसायमान होकर अपना अहोभाग्य जान मन्दिरमें "जय-जिनेन्द्र २" का उच्चारण करते हुए प्रवेश करे और श्रीजीके प्रतिबिम्बको देखते हुए "जय निशी, जय निशी, जय निशी" ऐसे तीनवार उच्चारण करे. ताकि कोई देवादिक दर्शन करनेको आया होय तो अलग होजाय और उसके व तुम्हारे कार्यमें विघ्न न हो पश्चात् श्रीजीके एक तरफ खड़ा होकर तीन-वार नमस्कार करे वीतराग छबिको देखकर मनमें विचारे

"अहो मेरा धन्यभाग है जो आज मैंने आत्मस्वरूपके बतानेवाले अथवा आत्मस्वरूप श्रीजिनेन्द्रदेवके दर्शन किये, धन्य २ है यह वीतराग छबि, जिसके दर्शनमात्रसे आत्मस्वरूपकी उपलब्धि होकर सर्व पाप दूर होजाते हैं. क्या कभी ऐसा शुभ अवसर आवेगा जब मैं पापी, मूर्ख, अधर्मी इस गृहस्थारंभके महापापोंसे छूटकर ऐसी मोक्षस्वरूप वीतराग मुद्राको धारण करूंगा."

पद ॥

घड़ी धन आजकी येही, सरा सब काज मो मनका ॥
गये अघ दूर सब भजके, लखा मुख आज जिनवरका॥१॥
विपत नाशी सकल मेरी, भरे भंडार सम्पतिका ॥
सुधाके मेघहू बरषे, लखामुख आज जिनवरका ॥ २ ॥
भई परतीति यह मेरे, सही हो देव देवनके ॥
टूटी मिथ्यात्वकी डोरी, लखा मुख आज जिनवरका॥३॥
विरद ऐसा सुना मैं तो, जगतके पार करनेका ॥
नवल आनन्द हू पायो, लखामुख आज जिनवरका ॥ ४॥

इसप्रकार भावोंकी निर्मलता सहित स्तोत्र पढ़ता, मस्तक नम्र ा, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावके अनुसार एक द्रव्यसे वा अष्टद्रव्यसे भक्ति पूर्वक भगवानकी पूजनकर जन्म, जरा, मरण त्रिदोषके नाशके हेतु श्रीजिनेन्द्र

देवको तीन प्रदक्षिणा (श्रीजीके दहिने हाथकी ओरसे दीजाती है) दे, और यह पाठ पढ़े.

श्लोक.

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम् ॥
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम् ॥ १ ॥

देवनके देवका दर्शन पापका नाश करनेवाला, स्वर्ग जाने में सीढ़ीके समान तथा मोक्षका साधन है.

दर्शनेन जिनेन्द्राणाम्, साधूनां वन्दनेन च ॥
न चिरं तिष्ठते पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥ २ ॥

श्रीजिनेन्द्र देवोंके दर्शन करनेसे और साधुओंकी वन्दना करनेसे पाप बहुत दिनोंतक नहीं ठहरते जैसे छिद्रवाले हाथमें पानी नहीं ठहरता (धीरे २ चूजाता है उसी तरह पाप धीरे २ दूर होने लगते हैं.)

वीतरागमुखं दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभम् ॥
नैकजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ॥ ३ ॥

पद्मरागके समान शोभनीक श्रीवीतराग भगवानका मुख देखकर अनेक जन्मोंके किये हुए पाप नाश होजाते हैं.

दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसारध्वांतनाशनम् ॥
बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थप्रकाशनम् ॥ ४ ॥

सूर्यके समान श्रीजिनेन्द्रदेवके दर्शन करनेसे सांसा-

रिक अंधकार नष्ट होता है, चित्तरूपी कमल फूलता है और सर्व पदार्थ प्रकाशमें आते है. अर्थात् ज्ञात होते हैं

दर्शनं जिनचंद्रस्य, सद्धर्मामृतवर्षणम् ॥
जन्मदाहविनाशाय, वर्धनं सुखवारिधेः ॥ ५ ॥

चंद्रमाके समान श्रीजिनेन्द्रदेवका दर्शन करनेसे सत्य धर्मरूपी अमृतकी बर्षा होती है, जन्म २ का दाह ठंडा होता और सुखरूपी समुद्रकी बृद्धि होती है.

जीवादितत्वप्रतिपादकाय,सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणार्णवाय॥
प्रशांतरूपाय दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥६॥

श्रीदेवाधिदेव जिनेन्द्रदेवको नमस्कार होहु, जो जीव आदि सात तत्त्वोंको बतानेवाले, सम्यक्त आदि आठ गुणोंके समुद्र, शांतरूप तथा दिगम्बर रूप हैं.

चिदानंदैकरूपाय, जिनाय परमात्मने ॥
परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥ ७ ॥

श्रीसिद्धात्माको नित्य नमस्कार होहु जो ज्ञानानंदरूप हैं; अष्ट कर्मोंको जीतनेवाले, परमात्मस्वरूप तथा परम तत्व परमात्माके प्रकाश करनेवाले हैं.

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ॥
तस्मात् कारुण्य भावेन, रक्षरक्ष जिनेश्वर ॥ ८ ॥

हे जिनेश्वर, आपही मुझे शरणमें रखनेवाले हो

और कोई शरणमें रखने योग्य नहीं है। इसलिये कृपा-पूर्वक आप मेरी संमारके पतनसे रक्षा कीजिये.

नहि त्राता, नहि त्राता, नहि त्राता जगत्रये ॥
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ॥ ९ ॥

तीन लोकके बीचमें कोई अपना रक्षक नहीं है, यदि कोई है तो हे वीतरागदेव आपही हैं क्योंकि आपके समान न तो कोई देव आजतक हुआ और न होगा.

जिने भक्तिर्जिनेभक्ति, र्जिने भक्तिर्दिने दिने ॥
सदामेऽस्तु, सदामेऽस्तु, सदामेऽस्तु भवे भवे॥१०॥

मैं यह आकांक्षा करता हूं कि जिनेंद्र भगवानसें मेरी भक्ति दिन २ और प्रत्येक भवमें सदा बनी रहे.

जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवेच्चक्रवर्त्यपि ॥
स्याच्चेटोपि दरिद्रोपि, जिनधर्मानुवासितः ॥ ११ ॥

जिनधर्म रहित चक्रवर्ती भी अच्छा नहीं. जिनधर्मका धारी दास तथा दरिद्री भी हो तो अच्छा है.

जन्मजन्मकृतं पापं, जन्मकोटिमुपार्जितं ॥
जन्मभृत्यु जरातङ्कं, हन्यते जिनदर्शनात् ॥ १२ ॥

जिनेन्द्रके दर्शनसे करोड़ों जन्मके किये हुए पाप तथा जन्म मृत्यु जरारूपी तीव्ररोग अवश्य २ नष्ट होजाते हैं. इस प्रकार चित्त लगाकर दर्शन पढ़े.

फिर एक तरफ जहांसे भगवानकी मुद्रा अच्छी तरह दीखे खड़े होकर स्थिरचित्तहो, पंचकल्याणक तथा ध्यानमुद्राका वार २ स्मरणकर भक्ति पूर्वक भगवानके गुण गावे, कि "हे त्रैलोक्यनाथ ! हे सर्वज्ञ वीतराग ! हे देवाधि देव ! हे अनन्त चतुष्टय कर मंडित, अर्हंतभगवान ! तुम जयवंत हो, धन्य है आपकी ध्यानारूढ मुद्रा और धन्य है आपका पवित्र नाम, आप तरण तारण हो. करुणा-निधान दयाके सागर हो, अधम उधारन दीनदयाल हो, शरणागत प्रतिपाल हो, हे प्रभु ! आप जयवंते होहु, आपको वार २ नमस्कार है, आप संसार समुद्रके पार करनेवाले हो, इंद्रादिकदेव आपकी सेवा करते हैं, मैं कहांतक आपका यश कहूं इत्यादि गुण वर्णन कर यह स्तुति पढ़.

स्तुति.

प्रभु पतित पावन, हौं अपावन चरण आयौ शरणजी ॥
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरणजी ॥१॥
तुम ना पिछान्यौ, अन्यमानो देव विविधिप्रकारजी ॥
या बुद्धि सेती निज न जान्यों, भ्रम गिन्यो हितकारजी २
भव विकट बनमें कर्म वैरी ज्ञान धन मेरो हरो ॥
सब इष्ट भूल्यौ, भृष्ट हूजौ, नष्टगति धरता फिरो ॥ ३ ॥
धनि घड़ी, धनि या दिवस योही जन्म धन मेरो भयो ॥

अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुजीको लख लयो॥४
छबि वीतरागी, नग्नमुद्रा, दृष्टि नासापै धरें ॥
वसु प्रातिहार्य अनंतगुण युत, कोटि रवि द्युतिको हरें ॥५
अब मिट्यौ तिमिर मिथ्यात्व मेरौ उदय रवि आतम भयौ
मोहर्ष उर ऐसौ भयो, मनु रंक चिन्तामणि लयौ ॥ ६ ॥
मैं हाथ जोड़ि नमाय मस्तक, वीनऊं तुम चरणजी ॥
परमोत्कृष्ट, त्रैलोक्य पतिजिन सुनहु तारन तरनजी ॥७॥
जांचूं नहीं सुरवास पुनि नर राज, परिजन साथजी ॥
बुध जांचहूं तुम भक्तिभवभव, दीजिये शिवनाथजी॥८॥

इसप्रकार भगवानकी स्तुतिकर तीन आवर्त एक शिरोन्नति और अष्टांग नमस्कार पूर्वक दण्डवत कर पश्चात गंधोदक (चरणोदक) हृदय भाग और मस्तकमें लगावे और लेते समय यह मंत्र बोले.

श्लोक.

निर्मलं निर्मलीकरणं, पवित्रँ पापनाशनँ ॥
जिनचरणोदकं वंदे, अष्टकर्मविनाशकं ॥ १ ॥

सोरठा.

जिन तन परम पवित्र, परसभई जग शुचिकरन ॥
सो धारा मम नित्त, पाप हरौ पावन करौ ॥ १ ॥

इसप्रकार गंधोदक लगाय अपना सौभाग्य समझे, परंतु लेते वक्त इस बातका ध्यान अवश्य रक्खे, कि

गन्धोदक जमीनपर न गिरने पावे, और न अशुद्ध हाथसे लियाजाय, गन्धोदकके पास जलका एक कटोरा अवश्य रक्खा जाय जिससे गंधोदक लेनेबाद उँगली धो लीजांय.

इतना कार्य करलेनेके पीछे अवकाशानुसार एकाग्रचित्त करके ध्यान, जाप्य, सामायिक, स्वाध्याय अवश्य करना उचित है. क्योंकि स्वाध्याय धर्मका मूल और शान्तिताका उत्पादक है. जो आनन्द ध्यानमें है वह आनंद और किसी बातमें कदापि काल नहीं है. ग्रंथावलोकनके विषयमें किसी विद्वानका यह वचन है कि "ग्रंथावलोकन हम सबको विनादंड वा लकुटप्रहार, कुटिलशब्द बोले वा क्रोध किये वा विनाद्रव्यलिये भी शिक्षा देसक्ता है. यदि आप इसके सन्निकट जाइये तो यह सोता न मिलेगा, यदि आप जिज्ञासु होकर प्रश्न करना चाहते हैं तो यह आपको ठीक २ पूरा उत्तर देगा. यदि आप इसको भलीभांति न समझेंगे तो यह नाराज़ न होकर प्रसन्नता पूर्वक आपको अच्छी तरह समझावेगा और कदापि आपकी मूर्खता पर हंसेगा नहीं" इसलिये पुस्तकालयके सिवाय दूसरी अमूल्य वस्तु संसारमें नहीं है. जो पुरुष सत्य धर्म, विज्ञानादिको जानना चाहें वह निर्दोष वीतरागी आप्त वा गुरूके कथित ग्रंथोंका अवलोकनकर आत्महित करें. स्वाध्याय करनेमें

जो लाभ हैं वो सब लोग जानते है, यह सब तपोंका मूल और सब सत्कर्मोंमें श्रेष्ठ है.

मन्दिरमें विकथा वा घर संबधी चर्चा, आरंभी कार्य वस्त्राभूषण, लैनदैन, विवाह-सगाई, झगड़ा, तकरार, हांसी, खेल कूद नहीं करना चाहिये, धर्मायतनमें जाकर ऐसा करनेसे पुण्यके बदले पापका बंध होता है इसलिये भूलकर भी दोषरूप प्रवर्तना योग्य नहीं.

श्रावकाचारादि आचार शास्त्रोंमें ८४ आच्छादनोंका जहां तहां वर्णन कियागया है वह धर्मायतनमें जाकर लगाना योग्य नहीं. सबसे मैत्रीभाव रक्खे यदि बालक साथ जाता हो तो उसे लघुशंका, दीर्घशंकासे निश्चिन्त कराके लेजावे और मन्दिरजीमें भी यह विचार रक्खे कि वह वहां किसीप्रकार अपवित्रता करने या दूसरोंके धर्म साधनमें बाधा न डालने पावे. यह स्मरण रखनेके योग्य बात है कि ८ वर्षकी अबोध अवस्थातककी संतान जो कोई लोकविरुद्ध, राज्यविरुद्ध और धर्मविरुद्ध कार्य याने पाप करे तो उसके अपराधी माता पिता होते हैं.

इसप्रकार धर्मसाधनसे निपटकर स्त्रीको गृहस्थीक काममें लगना योग्य है क्योंकि पुरुषके लिये धर्मसाधन और आजीविका ये दो मुख्य कार्य हैं और स्त्रीके लिये र्मसाधन और रसोई. जिनके घरमें स्त्रियां शुद्ध क्रिया-

पूर्वक रसोई नहीं करतीं वे केवल नाममात्रके जैनी है. उनका व्रत, नियम पालना कठिनही नहीं किन्तु असंभव है. इसलिये प्रत्येक स्त्रीको उचित है कि रसोईकी शुद्धता पर विशेष ध्यानदे, शुद्ध भोजन करनेसे बुद्धि भी शुद्ध और धर्म मर्मके धारण करने योग्य होजाती है. रसोईकी क्रियामें इतनी बातोंपर ध्यान देना अवश्य है.

चौकेकी क्रिया.

जो लोग शुद्धाचरणरूप पवित्र धर्मके धारक जैनी तो कहलाते परंतु उनकी स्त्रियां मूर्खा और अनाड़ी होकर खानपान शुद्ध नहीं रखतीं,वे जैनी होकर भी जैनी नहीं हैं उनसे कोई भी व्रत नियम पलना तो दूर रहे भक्ष्य भोजनभी करना नहीं बनसक्ता, इसलिये कुलीन घरकी बहू बेटियोंको उचित है कि रसोईकी शुद्धतापर ध्यानदें. जिस घरमें चौकेकी शुद्धता है वहां ही पवित्र भोजन तय्यार होता है. पवित्र भोजन करनेसे शरीर पवित्र और बुद्धि धर्मरूप होती है. जिनका शरीर अभक्ष्य भक्षण करनेसे अपवित्र है उनके हृदयमें कदापि धर्म नहीं समासक्ता, जैसे शेरनीका दुग्ध सुवर्ण के पात्रही में ठहरता वैसे ही यह पवित्रधर्म शुद्धाचरणी पुरुषोंके हृदयमें वास

करता है, इसलिये जो स्त्री पुरुष अपने कल्याणके अर्थी हैं उन्हें शुद्ध खानपान व आचरण रखना अवश्य है.

प्रगट रहे कि जल तथा भोजन सामग्री, बर्तन, रसोईका स्थान, ईंधन इन चारों पदार्थोंके बिना रसोई तय्यार नहीं होसक्ती इसलिये इन चारोंकी शुद्धता नीचे लिखे अनुसार रखनेका नामही चौका कहलाता है ॥

जल—कूप, तालाव, नदी, बावड़ी आदि पवित्र जलस्थानसे (जहां लोग शौच्य न करते हों या ढोर पानी न पीते हों) भली भांति छानकर लावे, छाननेका वस्त्र उज्ज्वल गाढ़ा, साफ सूतका ३६ अंगुल लंबा २४ अंगुल चौड़ा हो, इसे दुबरता करके छानना, यदि बर्तनका मुंह बड़ा हो तो छन्ना भी इतना बड़ा रखना चाहिये जो दुबरता करनेपर मुंहसे तिगुणा हो. सदा पवित्र और मँजे हुए बर्तनमें धीरे २ पानी छाना जावे जिससे अनछन्या पानी एक बूंद भी व्यर्थ न गिरने पावे. अपने हाथमे पानी भरकर लाना सर्वोत्तम है यदि ऐसा न हो तो मदिरा, मांसादि अभक्ष्य भक्षणके त्यागी उच्चकुलके विश्वासी (आदमी) से भराना योग्य है. पानीको छानने बाद जीवानी (त्रस-राशि) उस जलस्थानमें ही यत्नपूर्वक क्षेपण कराना चाहिये, जहांसे कि पानी लायागया हो यदि पानी कुएँसे लायागया हो तो जीवानी कड़ीदार लोटेसे

डाली जाय जिससे वह बीचहीमें न रहकर पानीतक पहुंच जाय ॥

छने हुए जलमें लौंग, हरडे, लकड़ीकी राख आदि द्रव्य शास्त्रोक्त प्रमाणसे डालदेनेसे उसका स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आदि बदलकर, जलकायके जीव चय जाते और त्रसकी उत्पत्ति नहीं होती, इसप्रकार शुद्ध (प्रासुक) किये हुए जलकी मर्याद दो प्रहरकी है, साधारण गर्म-जलकी ४ प्रहर और उकाले याने अधनके माफिक गर्म-कियेकी मर्यादा ८ प्रहरकी है. प्रासुक जल अपनी मर्या-दाके भीतरी वर्तलेना या डालदेना चाहिये. क्योंकि फिर वह किसी प्रकार भी शुद्ध नहीं होसक्ता. शुद्ध जलसे धर्म-की रक्षाके साथ २ शरीरकी नीरोगता भी रहती है, और यही जैनीका एक मुख्य चिन्ह है. दुःखकी बात है कि जैनियोंमें जल छाननेकी विधिका वर्तमानमें एक तरहसे अभावही पाया जाता है. पानी छाननेके लिये कोई पतला, पुरानी धोतीका टुकड़ा जाति बिरादरीके भयसे नाम मात्र रखते जिससे छोटे जीव तो क्या? किन्तु बडे २ कीड़े आदि भी छन्नेमेंसे चले जाते है, यदि बिरा-दरीका भय न होता तो अन्यमतावलम्बियोंकी नाँई खुल्लमखुल्ला अनछन्या पानी पीने लगते सो जिनके

हृदयमें दयाका लेश भी नहीं वे जो कुछ अनर्थ करें, सभी थोड़ा है.

अनछने पानीके पीनेसे निर्दयताके सिवाय नानाप्रकारके रोग भी शरीरमें होते हैं, इसी लिये जगतके प्रायः सभी विद्वान वैद्य, हकीम और डाक्टरोंने पानी छानकर काममें लानेकी राय दी है. अंगरेज लोग यद्यपि पानी छानने और बेचारे असहाय छोटे २ जीवोंकी रक्षा करनेकी रीति नहीं जानते तथापि शरीर रक्षाके लिये पानीको शुद्धकर पीते हैं. यह कार्य स्त्रियोंकी जरासी सावधानीसे अच्छी तरह सम्पादन होसक्ता है, हमेशह घरमें दो तीन छनने रखना चाहिये और जीर्ण होनेपर अलग करदेना उचित है. सबसे उत्तम बात तो यह है कि जलस्थानसे पानी छानकर लाया जावे फिर जिस समय पीना हो, छानकरपीवे, और शाम सुबह सब जल छानकर जो जीवानी हो उसे यत्नाचार पूर्वक जलस्थानमें पहुंचावे.

भोजनसामग्री–अन्न अवींध होना उचित है, उसका छड़ना (छानना) पिछोड़ना (फटकना, साफ करना) बीनना, कूटना, पीसना आदि उजेलेमें सावधानीपूर्वक करना उचित है. जब पीसो, कूटो या दलो तो अच्छी तरह देखलो कि उसमें कोई जीव तो नहीं है. चक्की,

ऊखली आदिमेंसे यत्नाचारपूर्वक सब अन्न निकाल लेने-पर भी सूक्ष्म अंश रहजाते हैं जिससे उनमें बहुधा छोटे २ जीव उत्पन्न होते हैं इनको कोमल बुहारीसे निकालकर और अनाजको चालनीसे चालकर व सूपड़ेसे फटककर भली भांति देख पीछे पीसने, छड़ने आदिका काम करना उचित है. कितनेही लोग अनाजको धोकर खाते हैं सो यह बात श्रेष्ठही है. परंतु अनछने पानीसे धोनेमे उल्टी अशुद्धता होजाती है इसलिये छने पानीसे धोनेपर ध्यान देना उचित है. बहुधा स्त्रियें बहुतसे दाल, चांवल, गेहूं आदिको बीनकर रख छोड़तीं और रसोई बनाने वा पीसनेके समय निकालकर बिनाशोधे काममें लाती हैं सो यह बात बेठीक है. सदा काममें लानेके पहिले चलनीमेंसे चाल लेना या शोध लेना योग्य है. रात्रिको पीसना आदि कार्य करनेसे अनेक जीवोंकी विराधना होती है. इसलिये रात्रिको तथा अंधेरेमें आरंभ करना आचार्योंने जहां तहां वर्जन किया है.

आटेकी मर्यादा शीतकालमें ७ दिन, गर्मीमें ५ दिन और बरसातमें ३ दिनकी है इसके पीछे जीवोंकी उत्पत्ति होजाती है. चांवल, दाल, आटा, नमक, मिर्च आदिको ताजा लाकर सदा ढँके रखना चाहिये. विशेषकर वर्षा-कालमें जीवोंकी उत्पत्ति अधिक होनेके कारण पूरा २

ध्यान देना अवश्य है. बूरे, घी, आदि मिष्ट और सचिक्कण पदार्थोंके लिये तो सब ऋतुओंमें सदाकाल रक्षाकी आवश्यक्ता है क्योंकि तनक भी भूल करनेसे इनमें जीवोंके उत्पन्न होने वा बाहिरसे आनेमें देर नहीं लगती. कीड़ी, मकोड़ी तो इनकी गंधमात्रहीसे दौड़कर आजाती हैं.

बहुधा स्त्रियें गर्मीके मौसिममें दस २ पांच २ सेर मैदेकी सीमी (बिया) तोड़कर रख छोड़ती हैं जिनमें बरसात लगतेही सफेद रंगके हिलते चलते त्रस जीवोंकी उत्पत्ति होजाती है सो उनकी परीक्षा कौन करे? जिह्वा-लंपटी पुरुष मीठे और दूधके साथ खाकर बहुत खुश होते और बिचारे अनाथ जीवोंकी दया जराभी नहीं करते. इसी जीभकी लोलुपताके कारण हलवाईकी मिठाई सरीखी अभक्ष्य वस्तु भी उच्चजाति फरालके बहाने खाने लगी है. हलवाईकी दुकानपर पानीके छानने, दिनरातका विचार, जीवोंकी हिंसा, स्पर्शास्पर्श, मर्यादा आदिका तो हिसाबही नहीं, लम्पके नीचे रक्खे हुए थालके कलाकन्दपर (लम्पपर गिरकर मरे हुए) मच्छरोंका थर जमजाता है इसीप्रकार रात्रिके वक्त बनाये हुए खोवेमें बहुतसे मच्छरोंका खोवा बनजाता है सो एक २ बातको हम कहांतक कहें, जिनके आंखे हैं वे

प्रत्यक्षही देखलेवें, भला जरा विचार तो करो कि जब मिठाईकी हालत ये है तो फिर जो लोग हलवाईकी दूकानकी पुड़ी, पपड़िया, साग, तरकारी, दूध, दही आदि वस्तुयें खाते हैं वे अभक्ष्यभक्षी क्या सरावगी (श्रावक) कहलाने योग्य हैं? कदापि नहीं. जो लोग इसप्रकार निन्दकार्यमें प्रवर्तते हैं वे महा अविचारी और निर्दयी हैं, इसीप्रकार बहुतसे लोग पापड़, बड़ी, अथाना, राब आदि पदार्थ महीनोंकी बात तो क्या किन्तु वर्षोंके उड़ाया करते हैं सो ये सब बुरी रीतियां इस जातिमें कुसंगति और अज्ञानताके कारण फैलगई हैं, और इसी अभक्ष्य भक्षणके कारण नानाप्रकारके कुत्सित रोग जैनजातिमें भी फैल रहे हैं. जो बुद्धिमान जैनी है जिनके घरमें सती, साध्वी, आज्ञाकारिणी और जिनधर्मपालनेवाली स्त्रियांहैं उनके घरोंमें इन कुक्रियाओंका कदापि प्रवेश नहीं होसक्ता.

पुनः खानेके पदार्थोंमें आलू, रतालू, सकरकंद आदि कंदमूल, पुष्प और बिदल आदि २२ अभक्ष्य *

---

* २२ अभक्ष्यके नाम १ बैंगन २ द्विदल (छाछ या कचे दूधके साथ दुफाडिया (द्विदल) अनाज खाना) ३ बहुबीज फल ४ ओला ५ रात्रि भोजन ६ कन्दमूल ७ मांस ८ मधु ९ मदिरा १० मट्टी ११ माखन १२ विष १३ अचार (अथाना) १४ पीपल फल १५ बड फल १६ उदवर फल १७ कठुमर फल १८ पाकर फल १९ अजान फल २० तुच्छ फल २१ तुषार (वर्फ) २२ चलित रस ॥

पंच उदंबर याने बड़, पीपल, ऊमर, कटूमर, पाकर फल तथा ३ मकार याने मद, मांस, मधुको त्रसराशि समझ भूलकर भी मत खाओ.

रसोई बनानेके पहिले सर्व भक्ष्य तथा शुद्ध सामान भली भांति देख शोध अन्दाजके माफिक रसोईके स्थानमें लेजाओ, क्योंकि वहां गई हुई सामग्री सकरी होजाती और फिर बाहिर लानेके योग्य नहीं रहती. जितना काल तुह्मारा सामग्रीके शोधने और विवेक पूर्वक रसोई करनेमें लगता है मानो उतने समयतक तुमने क्रियाकोषजीका स्वाध्याय किया है. ऐसा समझ रसोई पूरे २ यत्नाचारके साथ करो, जिसमें दूसरा आदमी देखकर जानजावे कि यह उच्चकुल वालोंकी क्रिया सहित रसोई बनरही है. आटा माड़कर उसपर स्वच्छ और शुद्ध कपड़ा ढांकदो जो पहिरने ओढ़नेके काम न आया हो,जिससे मक्खियां न बैठने पावें और आटा माड़ते समय उंगलियोंमेंकी अंगूठिया उतार डालो क्योंकि ऐसा न करनेसे उनमेंका मैल आटेमें मिलजाता है. इसप्रकार दाल, भात, रोटी, शाक, खिचड़ी, खीर अथवा पुड़ी, पपड़िया आदि भोजन सामग्री अपनी योग्यतानुसार तय्यार करो,रसोईके सभी बर्तन भूलकर भी उघड़े मत रक्खो,नहीं तो भाफसे मरकर कितनेही

जीवजंतु उसमें गिरजाते हैं सो जो लोग नीची दृष्टि करके देखते और भोजन करते हैं उनको भली भांतिही मालूम होगा.

रात्रिको रसोई करना या खाना अति निंद्यकार्य है ऐसेही अंधेरी जगहमें भोजन बनाना या खाना रात्रि-भोजन समान सदोषीक जान त्यागना योग्य है.

इसप्रकार रसोई तय्यार करके हर्ष पूर्वक किसी साधर्मी, धर्मात्मा, संयमी पुरुषको (जो भाग्य योगसे प्राप्त होजावे) भोजन करावे. जहांतक होसके अपनी शक्तिअनुसार नित्यही संयमी पुरुषोंका खानपान द्वारा यथायोग्य सत्कार करना गृहस्थोंका मुख्य धर्म है. जो पुन्यवान हैं उन्हींकी लक्ष्मी सत्पात्र दानमें खर्च होकर सफल होती है. जिनको मुनीश्वर, अर्यिका, श्रावक, श्राविकाको आहारदान देनेका सु अवसर प्राप्त होता है. उनके सौभाग्यकी सराहना हम कहांतक करें. ऐसे ही सत्पुरुषोंके गृहविषैं सर्वप्रकारके अनिष्टकी हानि होकर इष्टका लाभ होता है. यदि कोई अतिथि प्राप्त न हो तो अपने घरविषें जो संयमी तथा वृद्ध पुरुष हो पहिले उसे जिमाय पीछे घरके पुरुष पश्चात् स्त्रियां भोजन करें, ऐसा न हो कि रसोई बनाकर पहिले तो स्त्रियां नैवेद्य लगाकर बैठरहें. पीछे औरोंको झूठे चौकेमें

भोजन करनेको मिले. जिनके चौकेमें ऐसी कुरीति है वे भ्रष्ट और निर्लज्ज पुरुष सदा दरिद्री रहते हैं. इस प्रकार भोजन करने बादही तत्काल बर्तन मल डाले, जूठे (झूठे) न पड़े रहने दे. क्योंकि झूठे बर्तन बड़ी देरतक पड़े रहनेसे झूठनमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति होजाती, मक्खियां भिन २ करतीं अथवा पानी पड़ा हो तो उसमें गिरकर मरजातीं या बर्तनोंको कुत्ते बिल्ली चाटकर अपवित्र करते हैं.

रसोईकी मर्याद इसप्रकार है पक्की रसोई. लाडू, घेवर, बाबर, मसेरी (खारा सेव) बुंदी (लुग्दीदाना) आदि की जिसमें जलका अंश कम हो ८ प्रहरकी मर्याद है. पुआ, पुड़ी, भुजिया वगैरह अधिक सचित्त होनेसे इनकी मर्याद ४ प्रहर, खाटा (कड़ी) खिचड़ी आदि कच्ची रसोईकी मर्याद दो प्रहर, जिस रसोईमें पानी न पड़ा हो जैसे मगद इसकी मर्याद आटेके बराबर जानो. दूध दुहकर तत्काल छान, गर्म करनेसे शुद्ध रहता है इसकी मर्याद ८ प्रहर और गर्म जल डालकर तय्यार किई हुई छाछकी मर्याद ४ प्रहर व कच्चे जलसे करी हुई छांछकी मर्याद जलके बराबर २ घड़ीकी जानो. दही जमानेका सर्वोत्तम उपाय यह है कि कल्दार रुपयेको सामान्य रीतिसे गर्म करके प्रासुक दूधमें डालदेनेसे

चार प्रहरके भीतर २ उमदा दही जम जाता है. इसके सिवाय और पदार्थोंकी मर्याद श्री क्रियाकोष जीसे जानकर उसी माफिक वर्तना योग्य है. क्योंकि मर्यादा उपरान्त हरएक पदार्थमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति होजाती है. दही छाछके साथ ऐसे अनाज मेवादि जिनकी दोदालें होसकें मिलाकर वउनकी कोई चीज बनाकर नहीं खानी चाहिये इसको विदल कहते हैं इसके खानेसे अनेक दोष उत्पन्न होते हैं. जो लोग ऐसे पदार्थ खाते उन्हें हिंसाका पाप लगता और स्वाद बिगड़े हुए पदार्थोंको खानेसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होते जिससे धर्म साधनमें अनेक विघ्न पड़ते हैं. इसीकारण परमाचार्य्योंने अपनी करुणा बुद्धि द्वारा बार २ पुकारकर शिक्षा दी है कि ताजा और शुद्ध पदार्थ खाओ जिससे निरोगी और हृष्ट पुष्ट रहकर लौकिक और धार्मिक कार्योंको भलीभांति साधन करसको.

बर्तन–पवित्र और राखसे अच्छी तरह मंजे हुए हों, यदि कोई बर्तन प्रमाद वश झाड़ेके लोटे वगैरहसे स्पर्श होगया हो उसमें आग डालकर शुद्ध करलो, और भूलकर भी कभी थाली, परात (कोपर) बटुआ (भरनिया कांसिया) गिलास वगैरह कोई बर्तन गाय, भैंस, कुत्ता, बिल्ली आदि जीवोंको मत चाटने दो क्योंकि ये अपवित्र

पदार्थ खाते जिससे इनके झूठे बर्तन अपवित्र होजाते हैं. आज कलकी स्त्रियां प्रमाद तथा अज्ञानता वश अपने साम्हने श्वान, मार्जार आदि नीच तिर्यंचोंको वर्तन चांटते देखतीं रहतीं और हाथसे ताड़ने और उठकर खेदनेकी बात तो दूरही रहो मुखसे ललकारनेमें भी तकलीफ समझती हैं. जिनके चौके, वर्तनों और रसोईमें ऐसी अपवित्रता है अथवा जो खड़े बैठे जहां तहां मोलकी पुड़ी तरकारी लेकर जूते पहिनें हुए खाकर मुंह पोंछ लेते है. आचार विचार जिनके नाममात्र नहीं. न जातिका भय है न धर्म और लोकलाजका ऐसे लोग "महाजन" कहलाने योग्य नहीं हैं. जो लोग अभक्ष्य तथा कुत्ता, बिल्लीकी झूठ न खाने वाले हों उनको हम महाजन तथा शोधका भोजन करनेवालें कहे यह जैन-कुलमें लज्जायोग्य बात है. विचारनेकी बात है कि यदि अपनेही कुटुम्ब परिवार तथा बिरादरीका कोई मनुष्य किसी बर्तनको झूठा करदे तो उसमें कोई दूसरा नहीं जीमता यह श्रावकाचारकी रीति है. फिर कुत्ते, बिल्लीके स्पर्शमात्रसे जब बर्तन अपवित्र होजाता है तो उसके झूठे वर्तनोंको बिना अग्निसंस्कार किये पवित्र मान लेना कैसे महा निंद्य कार्य नहीं है? जो स्त्री रसोईके बर्तनोंको चांटते हुए देख कुत्ते, बिल्ली आदि नीच जानवरोंको

नहीं रोकती, वह महा मूर्खिनी और दरिद्रनी है क्योंकि वह अपवित्र बर्तनोंमें आप भोजन करती तथा घरके मनुष्योंको जिमाके भ्रष्ट करती है. इसलिये जो समझ-दार और पवित्र स्त्रियां हैं वे सदा बर्तनोंकी शुद्धता और सफाईपर ध्यान देती हैं.

रसोईका स्थान जिसको लोग चौका कहते हैं कीड़ी, मकोड़ी आदि जीवजन्तुओंकी उत्पत्ति रहित, एकान्त स्थानपर हो, जहांकि कूकर, बिलाव आदि प्रवेश न कर-सकें, जमीन प्रासुक (सूखी) हो, उजालेदार मकान हो, रसोईके स्थानकी हद हो, चँदोवा बंधा हो, ताकी ऊपरसे जीवजंतु गिरनेकी बाधा न रहे, चौके के माफिक चक्की, उखली, परिंडा (घिनौंची) छांछ करनेके स्थान आदिपर भी चँदोवा रखना जरूर है. नित्य चौकेको कोमल बुहारीसे बुहार तथा देख भालकर चूल्हेकी राख निकाल, मिट्टी या राख मिलाकर प्रासुकजलसे पोतना उचित है. ऐसा न हो कि जिस चौकेमें रसोई बनाते समय घृत, शक्कर आदि व भोजन करते हुए झूठन गिरती है वह महीने २ भर तक साफ न कियाजाय और रोज २ उखरड़े (घूरे) की नांई उसी स्थानपर रसोई बनाकर पेटभर लियाजाय. सो प्रत्यक्षही देखो कि चौकेमें कीड़ी, मकोड़ी, लट आदि जीवोंकी उत्पत्तिका

सहजही ठिकाना नहीं, तो फिर बिना पोते हुए चौकेकी दशा कैसी रहेगी यह बात हमारे भाई अच्छी तरह जान सक्ते हैं वहां भोजन करनेकी बात तो दूरही रहे, देखने मात्र घृणासी उत्पन्न होती है. कितनेही लोग अन्यमतावलम्बियोंकी देखादेखी रसोईके स्थानको जलसे छिड़क या जिसतिस प्रकार बिना बुहारे या रात्रिके समय जीवजंतुओंको बिना देखेही लीपदेते हैं और कहने लगते हैं "कि चौका लग गया" सो यह तो चौका लगाने याने पवित्रता करने और हिंसा बचानेके बदले विशेष हिंसा और अपवित्रता हुई जो सैकड़ों चलते फिरते जीव चौपट होगये तिसपर भी खूबी यह है कि चौका लगानेका पोता (कपड़ा) निचोड़कर सुखा देनेके बदले जैसाका तैसा पड़ा रहने देती हैं सो उसमें जलके संयोगसे सर्दीके कारण सैकड़ों कीड़े दूसरे दिन प्रत्यक्ष दृष्टि पड़ते हैं परंतु मूर्खा और आलसिनी स्त्रियोंकी दृष्टि ऐसे हीन दीन गरीब जीवोंपर कब पड़ती है वे दूसरे दिन बिना देखेही झटपट उसी पोतेको उठाकर चौकेकी लीपा लीपी उन सैकड़ों जीवोंके रुधिरसे कर डालती हैं. सो यह महा अनर्थकी बात है धर्मात्मा स्त्रियोंको उचित है कि अनर्थ दंडसे बचनेके लिये नित्यही पोता निचोड़कर सूखनेको डालदें, कोई २ अजान स्त्रियां

चौकेको गोबरसे लीपती हैं सो बहुत देरतक नहीं सूख-नेके कारण त्रस जीवोंकी उत्पत्ति वा घात होता है इसलिये गोबरसे चौका लगाना योग्य नहीं.

इसप्रकार यत्नाचार पूर्वक चौका लगाय, स्नानकर शुद्ध होय, पवित्र वस्त्र पहिन रसोईका सामान शोध लेय, चौकेके भीतर जाय यत्नके साथ रसोई करे, इसी-प्रकार पुरुष भी भोजनके निमित्त हाथ पांव धोय, बाजा-र के व शौच्यादिके वस्त्र बदल चौकेमें जावे, जिससे गृहस्थोंकी मर्यादा और चौकेकी पवित्रता बनी रहे, जो स्त्रीपुरुष बिना नहाये व हाथ पांव धोये, जैसे तैसे अपवित्र वस्त्र पहिने निधड़क चौकेमें चले जाते हैं वे शूद्रोंके समान हैं. जिनको पवित्रता और अपने कुलकी उच्चता का कुछ भी ख्याल नहीं, फिर भी जो समझा-नेपर भी ख्याल नहीं करते, वे बहुत दरिद्री और कुटिल अनसमझ हैं. इसलिये स्त्रीपुरुष दोनोंको इस-विषयमें बहुत खबरदारी रखना उचित है.

ईंधन—अबींध और निर्जन्तु लकड़ी हो, इसे कोमल बुहारी या कपड़ेसे झाड़ लेना योग्य है. खासकर बरसा-तमें तो लकड़ियोंमें असंख्य जीव उत्पन्न होजाते हैं, यदि कोई अच्छीतरह थालीमें झटककर देखे तो उसे प्रत्यक्ष सैकड़ों जीव दृष्टिपड़ें. जहांतक कोयलेसे रसोई

बनानेकी योग्यता हो, वहांतक अच्छा है, कोयलेको चालनीमेंसे चाल लेनेसे अगर उसमें कोई जीवजन्तु हों तो निकल जाते हैं. कंडे (छेने) जलाना तो सर्वथा वर्जनीक है क्योंकि इनके बनानेमें हजारों जीवोंकी हिंसा होती तथा हर मौसिममें और खासकर बरसातमें तो असंख्यात जीव इनमें उत्पन्न होजाते हैं इसीकारण इनको ईंधनके काममें लाना सर्वथा अयोग्य है.

इसी भांति गृहस्थीके अन्य २ कार्य भी बहुत विचार पूर्वक करना योग्य हैं. बहुतसी स्त्रियाँ जब माथेके बाल धोतीं तब अपने हाथसे जूं निकालकर नखपर रख कुचल डालतीं अथवा नायन से निकलवाकर उनका सत्यानाश करातीं हैं सो यह कैसे निर्दयपनेका काम है कि वधिक तो एक जीव मारता है परंतु ये क्षणभरमें हजारोंको वध कर डालतीं और पवित्र जैन जातिको बदनाम करती हैं. उत्तम कुल तथा जातिसे ऐसी निन्द बातें सर्वथा बंद होना चाहिये.

इसीप्रकार धोनेका जल वगैरह डालना या पेशाब करना ऐसी जगहमें हो, जहां जल्दी सूख जाय, क्योंकि एकही जगहपर बहुत गीलापन होनेसे कीड़े उत्पन्न होजाते और बदबू फैलती है, इसीप्रकार पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति इन पंच थावरनकी रक्षाके निमित्त

आवश्यक्तासे अधिक इनको व्यर्थ मत वर्तो. ऐसी नहीं कि बेकाम पानी डाल दिया, या पृथ्वी खोदने लगे, जहां तहां बिना प्रयोजनही आग जलादी, बेकाम झाड़, फूल, फल, पत्ते तोड़ने लगे, अथवा निःप्रयोजन जलता हुआ चिराग लाल्टेनमें रक्खा, ये सब अनर्थ दंड पापके मूल हैं. और गृहस्थका मुख्य धर्म यही है कि थावर कायको आवश्यक्तानुसारही काममें लावे, त्रस कायकी संकल्पी हिंसाको सर्वथा त्यागे, और आरंभी अर्थात् धंधे संबंधी हिंसामें यत्नाचार पूर्वक प्रवर्ते. जो स्त्रियां गृहचारेके कार्य बिना बिचारे करती हैं वे बहुत निर्दयी और मूर्खा हैं, धर्मात्मा पुरुषोंको उनके हाथका पानी पीना भी योग्य नहीं. जो स्त्रीपुरुष इसप्रकार वर्तते हैं उनके पाप उदयकर बहुधा संतान नहीं होती और वे खुद, रोगी, दीन, दरिद्री बने रहते हैं और जिसप्रकार वे निर्दय होकर दूसरे जीवोंका घात करते हैं वैसेही जन्म २ में वे दूसरोंके द्वारा सताये वा मारे जाते हैं, कदाचित् संतान उनके होवे भी तो माता पिताकी आज्ञासे प्रतिकूल, दरिद्री, निर्दयी, दुखी, दुर्व्यसनी और मूर्ख मायाचारिणी होती है. जिसको देख माता पिता पछताते, रोते और दुखी होते हैं. ऐसाजान सदा काल वस्त्र धोने, स्नान करने, अनाज आदि साफ करने, चलने

फिरने, उठने बैठने, लीपने, पोतने आदि गृह व शरीर सम्बन्धी क्रियाओंमें यत्नाचार पूर्वक प्रवर्तो जिससे दया पले, जीवोंकी हिंसा टले, शरीर और कुटुम्बकी रक्षा हो और तुम्हें लौकिक, पारलौकिक सुखोंकी प्राप्ति हो.

चतुर्थ प्रकरण.

ऋतुक्रिया विचार.

दोहा।

जो नारी ऋतु क्रिया माँहि, बर्ते सविधि सयान ॥
ताके वर सन्तान है, सुख यश बुद्धि निधान ॥ १ ॥

प्रगट रहे कि स्त्रियोंके उदरमें एक डिंबकोष रहता है जिसकी चरमस्थली के रक्तसे प्रतिमास अंडेके समान छोटा पदार्थ उत्पन्न होता है। क्रमानुसार महीना पूर्ण होनेपर यह अंडा फटकर गर्भस्थलीके ऊपर नाभिसे जा मिलता है और रक्तादि मूत्र–मार्गद्वारा बाहर निकल आता है. इसप्रकार किसीके दो, तीन दिन किसीके पांच, सात दिनतक निकलता है. ऐसी क्रियायुक्त स्त्रीको पुष्पवती व रजस्वला कहते हैं इसके होनेका नियम तीन-दिनका है इससे कम या अधिक रोगके कारण होता है. यद्यपि यह क्रिया गर्भाधानके लिये कारण है तथापि

इन तीन दिनोंमें ऋतुवंती स्त्रीकी संज्ञा शास्त्रोंमें इस प्रकार कही है. "कि प्रथम दिवस चांडालिनी, द्वितीय दिवस रजकनी अर्थात् धोबिन और तीसरे दिन शूद्रनी समान अशुद्ध और अस्पर्श है" इसलिये उसे ऐसी दशामें गृहस्थीके हरकामसे अलग रहना चाहिये. किसी स्त्रीपुरुष वा बालकको छूवे नहीं, एकान्तमें रहे, भोजन, वस्त्र, बर्तन आदि अपने बर्तनेके सामानको अलग रक्खे, ताकि घरके और सामानसे स्पर्श न होने पावे. उसे यह भी योग्य है कि यहां वहां फिरकर अपनी व दूसरेकी हानि न करे इसप्रकार हरएक बातपर ध्यान देना उच्च जातिका चिन्ह और समझदारीका काम है. खेदका विषय है कि अज्ञानता और कुसंगके कारण आजकल इस क्रियापर स्त्रीपुरुष कुछ भी ध्यान नहीं देते और स्पर्शास्पर्शकी बाततो दूरही रहे. किन्तु पानी भरना, बर्तन मलना, वस्त्रादिक सींवना, पीसना आदि घरके काम भी स्त्रियां सहज रीतिसे करती रहती हैं और अज्ञानी पुरुष उनको कुछ भी नहीं बरजते जिसका नतीजा यह होता है कि यहां वहां फिरनेसे जिसतिसकी छाया उनपर पड़ती जिससे संतानकी नस्ल और स्वभावमें फर्क आजाता है. वर्तमान कालमें विशेषकर पापी, अधर्मी पुरुष संसारमें अधिक हैं सो यदि उनकी

परछांई पड़जावे तो संतान पापी, कुकर्मी, दुराचारिणी, मूर्ख और दरिद्रनी होती है. इसका कारण यही है कि स्त्रीको पुष्पवती होनेके अन्तमें जब गर्भाधानका समय आता है, तब यदि परपुरुषकी परछांई पड़जावे, या उसकी ओर मन चलायमान होजावे तो स्त्रीके शीलवंती होते हुए भी उस पुरुषकी सूरत और स्वभावके अनुसार संतान उत्पन्न होती है. सो प्रत्यक्षतः बहुत बालक माता पिताके स्वभाव तथा सूरतसे भिन्न किस्मके देखे जाते हैं. यह निश्चय जानो कि सर्वही स्त्रियां कुशीली नहीं होती किन्तु एक ऋतुक्रियाकी भ्रष्टतासे ये सब भेद होरहा है सो अवसरानुसार इस स्थानपर एक दृष्टान्त कहा जाता है.

किसी ग्राममें नेत्रहीन (सूरदास) चार पुरुष थे जो परस्पर मित्र होनेके सिवाय गुणवान भी थे, अर्थात् पहिला रत्न परीक्षक, दूसरा अश्व परीक्षक, तीसरा स्त्री-परीक्षक और चौथा पुरुष परीक्षक था. उन्होंने एकदिन आपसमें बैठे २ यह सलाह किई, कि अपन लोग यहां पर आजीविकासे दुखी हैं इसलिये परदेशमें चलकर अपने २ गुणोंद्वारा लाभ उठावें. ऐसा विचार चारों ग्रामान्तरको चले और चलते २ किसी बड़ी राजधानीमें पहुंचे, और अवसरानुसार वहांके राजासे मिलकर निवे-

दन किया, हे महाराज! हम चारों पुरुष अंधे और निरुद्यमी हैं. और आप दीनपालक हो, दयाकर हम लोगोंके लिये कुछ आजीविका प्रदान करनेकी कृपा कीजिये. उनकी ऐसी प्रार्थना सुनकर राजाने पूछा. हे विदेशी सूरदासो! क्या तुम कुछ धंधा भी करसक्ते हो. तब उन चारोंने अपने २ गुण राजाप्रति कह सुनाये. जिनको सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और कार्य-कर्त्ताओंको हुक्म देदिया कि इनको नित्य १ सेर आटा, १ छटाक दाल, १ तोला घी और १ तोला नमकका पेटिया (खुराक) राज्यकी ओरसे दियाजाय अतएव राजाकी आज्ञानुसार इनको पेटिया मिलने लगा और ये संतोषके साथ रहने लगे.

दैवयोगसे एकदिन कोई विदेशी जौंहरी कुछ जवाहिरात, हीरा, मोती, पन्ना रत्न आदि लाकर राजसभामें उपस्थित हुआ, तब राजाने रत्नोंकी जांचके लिये उस रत्नपरीक्षक सूरदासको बुलाकर आज्ञा दिई कि मुझे इस जौंहरीके पाससे कुछ जवाहिरात खरीदना है सो तुम खोटे खरे की परीक्षा करो. यह सुनकर उस अंधेने निर्दोष सचे रत्न छांटकर राजाके हवाले किये और कहा कि हे महाराज! ये खरे रत्न हैं यदि आपको विश्वास न हो, तो घनकी चोट दिलाकर देखलीजिये,

यदि कच्चे और नकली होंगे तो फूट जाँयगे, असली कदापि फूटनेवाले नहीं. तब राजाने इसके कहे माफिक परीक्षा कर जान लियाकि सूरदासकी जांच बहुत ठीक है और बहुत खुश होकर आज्ञा दी कि इसे आजसे डेढ़ तोला घी दिया जाय, ये बहुत होशियार आदमी है. इस तरह कुछ दिन बीतनेपर कोई विदेशी सौदागर घोड़े बेचनेके लिये राजसभामें आकर उपस्थित हुआ, इस अवसरपर राजाको अश्वपरीक्षक सूरदासकी आवश्यक्ता हुई. अतएव राजाने उसे बुलाकर एक घोड़ा जो बहुत सुन्दर, हृष्टपुष्ट और सुचाल था, अच्छे बुरेकी जांच करनेके लिये सौंपा॥ सूरदासने घोड़ेकी पीठपर हाथ फेरकर तथा गर्दन, मुख, पेट, पैर, पूंछ, कमर, मस्तक आदि अंगोंको टटोलकर कहा कि, हे राजन्! इस अश्वमें और तो सब सुलक्षण हैं केवल एक अवगुण बड़ा भारी है कि ये तालाब नदी आदि जलस्थानमें प्रवेश करतेही बैठ जायगा. यदि आप चाहें तो परीक्षा करलेवें, यह सुनकर राजाने तत्कालही घोड़ेपर सवार होकर तालावमें प्रवेश किया, घोड़ा सूरदासके कहे माफिक जलका संयोग पातेही लोटगया, तब राजाको प्रतीति आई और वहांसे आकर सूरदाससे पूछा कि तुमने घोड़ेका यह अवगुण कैसे जाना और इसके जलमें

बैठनेके क्या कारण हैं ? तब सूरदासने निवेदन किया कि महाराज ! जैसे चतुर वैद्य रोगीके हाथकी नाड़ी, मुख, जिह्वा, नेत्र, आदि अङ्गोंकी आकृति देख रोगकी परीक्षा करलेता है वैसेही मैंने इसके पेटपर हाथ फेरते ही फूली हुई नस जानकर मालूम कर लिया है कि इस घोड़ेकी मान भैंसका दूध पिया होगा, जिसकी गर्मीका अंश इसके अंगमें है, जिससे ठंडका मौका पाकर यह बैठ जाता है. निदान राजाने खुशहो इस सूरदासको भी ६ माशे घी अधिक देनेकी आज्ञा दी. इसप्रकार मौका आनेसे दो सूरदास तो राजाको अपना गुण बता चुके. एकदिन राजाने विचार किया कि शेष दो अन्धे बैठे २ मुफ्तमें खाते हैं उनके हुनरकी भी तो परीक्षा करना चाहिये. अतएव शेष दोनोंमेंसे पहिले स्त्रीपरीक्षक सूरदासको बुलाया और कहा कि तुम आज महलोंमें जाकर हमारी रानीकी परीक्षा कर मेरे सन्मुख यथार्थ निवेदन करो. ऐसा कहकर रानीको भी महलोंमें खबर कराई कि अभी थोड़ी देरमें एक सूरदासजी तुह्मारे महलमें आनेवाले हैं सो तुम उनकी सुश्रूषा, आदर सत्कार इत्यादि सावधानीसे करना. निदान रानी यह खबर पातेही शीघ्र अति हर्षके साथ स्नान उपटन कराय, शिरके केश गुंथवाय, बाल २ मोती पिरोय,

मस्तकपर तिलक संजोय, आंखोंमें अंजन आंज, नाकमें बेसर साज, कानोंमें कुंडल डाल, मस्तकपर साज जड़ाय, गलेमें हार लटकाय, नखसे शिख पर्यंत आभूषणोंसे युक्त होय, अमोलक सुहावने वस्त्र पहिन तय्यार हो रही. इसप्रकार रानी तय्यार होकर बाट देख रही थी कि इतनेमें एक खोजेके साथ स्त्री परीक्षक सूरदास राज-महल की डेवढ़ीपर जा पहुंचे. रानी इनको आते हुए सुन हर्षकी भरी कुछ भेट ले मदकी माती जोरसे खँखा-रती हुई, जल्दी २ धमधमाती सूरदासके सन्मुख आयी तब तो अंधेने इन ऊपरी चिन्होंसे ही रानीकी परीक्षा करके उल्टे पांव राजसभाको गमन किया और राजासे निवेदन किया कि हे प्रजापालक दीनरक्षक महाराज! यदि मेरा अपराध क्षमा हो तो मैं परीक्षा की हुई रानीके लक्षण वर्णन करूं. तब राजा अचम्भित हो कहने लगा, अच्छा तुह्मारा अपराध क्षमा है सच २ बात कहो. तब स्त्री परीक्षक सूरदास निर्भय होकर बोला, हे अन्नदाता! आपकी रानी किसी ओछे घरकी बेटी मालूम होती है यानी रानीके असलमें फर्क मालूम होता है. यदि इसकी माता क्षत्राणी है तो पर पुरुष रत है, और जो पिता क्षत्री है तो यह अवश्यमेव ओछी जातिकी स्त्रीके पेटसे उत्पन्न हुई है. ऐसे सूरदासके वचन सुनकर

राजा सुनसान होगया और तत्कालही महलोंमें पहुंच रानीसे बोला. हे प्रिये! एक बात मैं तुमसे पूंछना हूं सो सच २ कहना, कुछ अन्तर नहीं रखना, हमको यह बात ठीक करना है कि तुम किसकी पुत्री हो. यदि कुछ अन्यथा भी हो तो डरना नहीं, क्योंकि इसमें तुह्मारा क्या दोष है, भाग्य बलवान है. राजाके वचन सुन रानीने हाथ जोड़ वीनती की कि भो स्वामी! हे प्राणनाथ! मेरा अपराध क्षमा हो, सच २ बात तो यह है कि मैं बांदी (दासी) की कूंखसे उत्पन्न हुई हूं और आपके साथ सम्बन्ध होनेका कारण यह है कि जो कन्या आपकी मांगथी वह ठीक विवाहके समय मरणको प्राप्त होगई. इसलिये राजाने उसका मरण गोप्य रख मेरेसाथ आपकी शादी कर दी. इसप्रकार रानीकी वीनती सुन और उसपर विश्वास कर राजा सभामें आकर सूरदाससे बोला. कि हे सूरदास! तुमने कैसे जाना कि मेरी रानी बांदीसे उत्पन्न हुई है. तब सूरदासने निवेदन किया, हे राजन! हरएक आदमीकी हैसियत दो बातोंसे जानी जाती है एक तो बोलनेसे, दूसरे शरीरकी क्रिया याने चलने, फिरने, उठने, बैठने अथवा ऊपरी वस्त्राभूषण आदि ठाटबाटसे. सोही किसी कविने कहा है कि.

दोहा ।

भले बुरे सब एकसे, जबलौं बोलत नाँहि ॥
जान परत हैं काक पिक, ऋतु बसंतके मांहि ॥१॥
बड़े बड़ाई ना तजैं, बड़ो न बोलें बोल ॥
हीरा मुखसे ना कहे, बड़ो हमारो मोल ॥ २ ॥

हे महाराज! इसप्रकार मैंनें आपकी रानीकी परीक्षा बोलने चालनेसे कीई है. जो बड़े घरकी बेटी हैं जिनको मायके (पीहर) और सुसरालकी शरम तथा अपने पिता और पतिकी इज्जत आबरू का ख्याल है, जो लोकनिन्दा और अपयशमे डरती हैं, वे मर्याद पूर्वक धैर्यताके साथ चलतीं, उठतीं, बैठतीं व बोलती हैं॥ इसके विरूद्ध जिसतिस प्रकार अधिक बोलना, चलना, उठना, बैठना निर्लज्जताका चिन्ह है इससे कमीनापन जाहिर होता है. बड़े घरकी बहू-बेटी, सास, ससुर आदि कुटुम्बी जनोंके सन्मुख अपने पतिसे भी कभी वार्तालाप नहीं करतीं. सो ही कुटिल स्त्रियोंके विषयमें कहा है ॥

॥ गीतिका छंद ॥

अपने पिताके वासमें, जहँ तहँ फिरें मतिमन्द ज्यों ।
घर २ में डोले झाँकती, बिन हेतुही स्वछंद ज्यों ॥
जहँ होय मेला तथा कौतुक, देखनेको जावहीं ।
परपुरुष बैठे होंय बहुते, होय तहँ ठाड़ी सही ॥ १ ॥

बहु भ्रमन पसंद विदेश जाकौं, एकली जँह तँह फिरे ।
व्यभिचारिणी जे नारि कुटिला, प्रीति तिनहूं ते करें ॥
नहिं लाज काहू की करैं, निजपति निरादर जासके ।
वह नारि महा कुलाङ्गना, यह जान लक्षण तासके ॥ २॥
क्षण मांहि रोवें अरु हँसे, उन्मत्त मदमें नित रहें ।
नहिं होय तोषित भोग सूँ, नित कामकी बाधा दहें ॥
चालैं मटकनी चाल आतुर, स्वाद जिह्वाका चहैं ।
ऐसी कुनारी स्वतः नाशैं, जयदयाल जैनी कहैं ॥ ३ ॥

इसलिये हे पृथ्वीपति ! कुलवन्ती भार्या अपने सर्व अङ्गोपाङ्ग सदा ढांके रहे हैं, नीची दृष्टि करके चले हैं. किसीसे जदवा तदवा संभाषण नहीं करै है, सकल कुटुम्बसे प्रीति राखै हैं. सम्पूर्ण प्राणीमात्रपर करुणा-भाव रख दया पालै हैं, दुखित भुखितको अपने घरसे खाली हाथ नहीं जाने देय हैं, धर्मात्मा जीवोंसे स्नेह करे हैं, देव, धर्म, गुरु तथा गुरुजनोंकी यथायोग्य विनय करे हैं. दर्शन, स्वाध्याय, शास्त्रश्रवण आदि धर्मकार्योंमें प्रवर्ते हैं, पतिकी आज्ञामें चले हैं, गृहकार्योंमें सावधान रहे हैं, विवेकपूर्वक शुद्ध रसोई करे हैं, मकान, बर्तन, सामान साफ तथा यथायोग्य स्थानपर रक्खे हैं अधकट काम नहीं करै हैं याने मूर्ख स्त्रियोंकी नाँई एक काम अधूरा छोड़ दूसरा करनेको नहीं दौड़े हैं क्यों कि

ऐसा करनेसे समय दूना लगनेपर भी कई काम अधूरे पड़े रहते हैं जिससे नुकसानके सिवाय अपवित्रता भी बहुत होती है. गृहस्थीमें विवेकवान सुलक्षणी स्त्रीकी सुव्यवस्थाके कारणही पतिकी अल्प कमाईमें बरकत होती है। उसही स्त्रीका ग्रहवास सफल है, वह ही घर सराहने योग्य है, वही अबला धन्य है, जो गृहस्थीमें रहकर बड़प्पनकी चाल चलकर यश कीर्ति पाती है. ऐसीही सौभाग्यवती स्त्रीकी हर कोई सराहना करते हैं और कहते हैं कि "अमुकके घरमें बड़ी भाग्यवती धर्मात्मा सुलक्षणी स्त्री है" इसके विरुद्ध जिसके घरमें स्त्री खोटी होती है उसके लिये कहते हैं कि "अमुकके घरमें बड़ी कमबख्त, अभाग्यवती, कलहारी, फूहर स्त्री है." "जबसे इसने घरमें पाँव रक्खा है, तबसे गृहस्थी तीन तेरह होगई है इत्यादि २" इस प्रकार भलेकी भलाई और बुरेकी बुराई जगतमें गाई जाती है. जिस घरमें स्त्री सुलक्षणी, विनयवती, धर्मात्मा और विच-क्षण होती है उस घरसे दुख, दारिद्र, रोग, शोक सभी दूर होकर सुख तथा लक्ष्मीका निवास होता है. इसके विपरीत जिसके घरमें ओछे घरानेकी, दुष्टचित्त, कलह-कारिणी, मूर्खा तथा आलसयुक्ता स्त्री होती है उस घरका सत्यानाश होजाता है, जिसके घरमें ऐसी पिशा-

चिनी नारी है वह पुरुष जीता भी नर्कवास भोगता है. फिर भी ऐसी स्त्रीसे उत्पन्न सन्तान कुलक्षण, शुभ-क्रिया वर्जित, धर्मसे विमुख, विद्याहीन, निर्बुद्धि, सप्त-व्यसनी, कुकर्मी, अल्पायु, पुन्यहीन, रोगी, अनेक बाधा-युक्त और दुखी होती है. इसप्रकार स्त्रियोंकी परीक्षाके अनेक अंतरंग और बाह्य चिन्ह कह कर वह सूरदास बोला हे महाराज! सबही स्त्रियाँ एकसी नहीं होतीं. स्त्रियाँ चार प्रकारकी हैं (१) पद्मिनी (२) चतुरनी (३) शँखनी (४) डंकनी. इनचारोंके शरीर लावण्य, रहनस-हन आदि भिन्न २ प्रकारके होते हैं, सो कुछ २ ऊपर सूक्ष्म-रूपसे कहही गये हैं इसप्रकार तीसरे सूरदाससे स्त्रीप-रीक्षाका ब्योरा ठीक २ जान राजा बहुत खुश हुआ और उपहारमें इसे भी ६ माशे घी अधिक देनेका हुक्म देता भया,

सबसे पीछे राजाने चौथे सूरदासको बुलाकर कहा, कि यदि तुम पुरुष–परीक्षा जानते हो तो हमारी परीक्षा कर यथार्थ गुणदोष कहो ? तब सूरदास तत्कालही हाथ जोड़, सीस नमाय बोला, हे दीनपालक! सचबात तो यह है कि आपकी परीक्षा मैं पहिले ही दिवससे करता चला आता हूँ. सो आज आपकी आज्ञानुसार निवेदन करता हूँ, कि आपका स्वभाव वणिकों सरीखा है. सूर-

दासके ऐसे अयुक्त वचन सुनकर सब सभा जन राजा सहित चकित होगये, सबकी आँखे नीची पड़गई, मन ही मन सोचने लगे कि यह क्या बात है ? उस समय राजाके तो होश हवास उड़ गये. परन्तु वह चतुर और साहसी था, मनमें सोचता भया, कि स्त्री, अग्नि, जल, नदी, सर्प, सिंह, बिच्छू, चोर, जार, ज्वारी आदि कुटिल स्वभाववालोंका विश्वास क्या ? जो इन पर विश्वास करते हैं वे महामूर्ख हैं, तिनमें कुलटा और व्यभिचारिणी स्त्रीका स्वभाव ऐसा है कि विश्वासघात करके पतिका मस्तक छेद परपुरुषके साथ रमणकर मरती है. इसविषयमें धर्मपरीक्षाजी ग्रंथमें लिखा है ॥

कवित्त.

"तीनोंही त्रिलोक बीच जेती है वनस्पती, लेखनी संभारै ताकी करकें तरज जू । तीनोंही त्रिलोक बीच जेते हैं समुद्र द्वीप, पर्वतकी स्याही कर आनके भरत जू । तीनोंही त्रिलोक बीच परी है जो जेती भूमि, ताहीं के सँभार आछे पत्र ले करत जू । शारदा सहस्रकर करके लिखत सदा, कामिनी चरित्र तोउ लिखेना परत जू ॥ १ ॥*

---

* यह वचन अधम स्त्रियोंहीके लिये चरितार्थ होता है.

राजाने उपर्युक्त प्रकार विचार सूरदासकी बातकी जांच करनेके लिये अपनी माताके महलमें जाय और हाथ जोड़ नम्रतापूर्वक पूंछा, हे मात! भवितव्य बलवान है उसको मेटनेको कोई समर्थ नहीं, इसलिये आप अपने चित्तमें व्याकुल न होकर जो बातमैं पूछता हूं उसका जबाव ठीक २ दीजिये! तब राजमाताने कहा. प्यारे सुपुत्र! ऐसी कौनसी बात है जो मैं तुझसे छिपाऊंगी, कहो तुम क्या जानना चाहते हो? तब राजाने कहा कि यह बताओ कि मैं अपने पितासे उत्पन्न हूं या किसी अन्य पुरुषसे? यदि मैं अपने क्षत्रिय वंशसे ही हूं तो क्या कारण है कि मेरा स्वभाव क्षत्रियोंके समान उदार नहीं है. तब रानी कुछेक चिन्तित होय घबराती हुई बोली, भो पुत्र! सच बाततो यह है कि एक समय मैं ऋतुवंती हुई मंनी चौथे दिवस स्नान करके महलपर बैठी शृंगार कररही थी कि उसी समय अमुक सेठ (जिसकी हवेली सरकारी महलोंके सामने है) अपने मकानकी छतपर स्नानकर रहा था, सो मेरी दृष्टि उसपर पड़ी और मेरी उसकी चार आँखें हुई, तत्कालही मेरे मनमें विकार उत्पन्न होता भया. दैवयोगसे उसीदिन राजाके संयोगसे मेरे गर्भाधान हुआ और तुम गर्भमें आये, सो हे पुत्र! तेरी उत्पत्ति यथार्थमें राजासेही है

यह निश्चय मान सिर्फ ऋतुक्रियामें इसप्रकार अंतर पड़ जानेसेही तेरी प्रकृतिमें अन्तर पड़ा है. यह सुन राजाने चौथे सूरदासके वचनोंपर प्रतीतकर चारों बुद्धिमान पारखी सूरदासोंको उनके अद्भुत गुणोंसे प्रसन्न हो बहुत पारितोषक देय सभामें रक्खा.

इस उपर्युक्त वार्तासे हम लोगोंको यही शिक्षा ग्रहण करना चाहिये कि ऋतुक्रियामें फर्क पड़ जानेसे कैसा बड़ा नुकसान होता है. कैसे शोकका स्थल है कि कहां तो क्षत्रिय धर्मका प्रबलपराक्रम, जो नंगी तलवार ले संग्राममें शत्रुके सन्मुख चोट करै, शत्रुको घातै वा अपना प्राण विसर्जन करै परन्तु रणसे पराङ्मुख हो कभी पीठ न दिखावे और दीन, अनाथ, असमर्थ जीवोंकी रक्षा छत्रके समान करै. ऐसा उदार कि जो लक्षावधि द्रव्य तो क्या किन्तु क्षणभरमें सम्पूर्ण परिग्रह त्यागी हो जावे. तेग त्याग दोनोंका धनी, जैसा रणशूर तैसाही तपशूर. इसप्रकार क्षत्रीका महान साहसी कुल, सो एक ऋतुक्रियाके बिगड़ जानेके कारण वणिक स्वभावका धारक होता भया, सो यह बात तो दृष्टान्तमात्र समझ अपनी तरफ नजर करना चाहिये कि ऐसीही दुर्दशा इस जैनजातिकी हो रही है, और यही सन्तानके धर्महीन होनेका एक प्रबल कारण है, ऐसा निश्चय कर कदापि ऋतुक्रियामें जदूवातदूवा मत प्रवर्त्तो.

यहांपर अवसरानुसार इस क्रिया सम्बन्धी दोष और उसमें किस रीतिसे प्रवर्तना, आदिका वर्णन किया जाता है. स्मरण रहे कि जो स्त्री ऋतुके समय किसीप्रकारकी कुचेष्टा करे है उसका पूर्वका किया हुआ धर्म, कर्म, पूजा, दान, जप, तप, व्रतादि सब धर्म निष्फल हो जाँय हैं, ऐसा जान जो अबला पापसे भय-भीत होकर अपने कल्याण की इच्छुक हैं उनको ऋतु समय बहुत सावधानीसे प्रवर्त्तना चाहिये.

जब स्त्रीको मालूम हो कि मेरे कपड़े होगये हैं तो उसी समयसे किसी वस्तु को न स्पर्शे, और न किसी कार्यको करे. यहांतक कि बालक तकको न छूवे. यदि बालक छोटा हो और लिये बिना न चले तो उसे भी स्नानकराकर किसी वस्तुको छूने दे, आप एकान्तस्थानमें तिष्ठे, शय्यापर शयन नहीं करे, पृथ्वीपर साँथरा या अन्य छोटा वस्त्र बिछावे जो कि सहज ही में धोया जासके. गरिष्ट भोजन नहीं खावे, शृङ्गार न करे, नेत्रोंमें सुरमा न आँजे, पान इलायची आदि मसाले भक्षण न करे, गीत न गावे, हंसी मज़ाक आदि न करे, मंदिरमें न जावे और न वहांका कोई उपकरण छूवे यहांतक कि अपने पतिसे भी किसीप्रकार कुचेष्टा न करे. इतनेपर भी यदि कोई नीच, कामातुर, धर्महीन, चाँडाल पति

ऐसे समय हठकर काम सेवन करै तो ऐसे अविवेकीके पापका प्रत्यक्षही उदय होकर, आतशक, सुज़ाक, गर्मी, प्रमेह, गठिया, वायु, स्वास, ज्वर, कोढ़, पक्क दाद, खुजली इत्यादि रोग होजाते हैं, और उसे आगामि नानाप्रकार नारकीय दुखोंकी प्राप्ति होती है और इसी जन्ममें कुटुम्ब, लक्ष्मी आदिका नाश होजाता है. क्योंकि आगमका वचन है कि जो कोई अविचारी, पापी पुरुष ऋतुकालमें स्त्रीसेवन करै और कदाचित गर्भ रहजाय तो प्रथम दिवसके गर्भाधानसे साक्षात चांडाल समान, दूसरे दिनके गर्भाधानसे बुद्धिहीन, पापी और दरिद्री तथा तीसरे दिनके गर्भाधानसे भाग्यहीन कुमार्गी सन्तान उत्पन्न होती है, ऐसा जान जो पुरुष स्त्री विवेकी तथा धर्मात्मा हैं वे इन तीन दिनोंमें अपने मनको वशीभूत रक्खें. और तो क्या, रजस्वला की परछांई मात्रका फल देखो कि यदि किसी चेचक या आंखके रोगी अथवा बड़ी, पापड़ आदि पर उसकी परछांई पड़जाय तो ये सब पदार्थ बिगड़ जाते हैं, यहांतक कि यदि विषधर जो सर्प तिसकी और रजस्वलाकी दृष्टि मिलजावे तो वह भी अंधा होजाता है, इसलिये अपना तथा दूसरोंका नुकसान होता जान ज्ञानवान स्त्रीको तीनदिन पर्यंत बेकाम यहां वहां न फिरना चाहिये. जो बड़े

कुलकी समझदार स्त्रियाँ हैं वे इनदिनोंमें एकान्त स्थानमें बैठ धर्मस्वरूपको विचार अपने मनमें पश्चात्ताप करती हैं कि अहो! धिकार इस स्त्री पर्यायको जिसमें इतने समयतक दर्शन, स्वाध्याय आदि धर्म कार्योंसे वञ्चित रहना पड़ता है सो ठीक ही है. विद्वानोंके मुँह सुनाही है कि मायाचारके तीव्र बंधसे यह स्त्री पर्याय होती है और उसी वासनाके कारण नीतिमें स्त्रीको माया तथा ब्रह्मघातिनी याने शीलका नाश करनेवाली कहा है सो मैं अब क्या करूं, इससे निवृत्त होनेका तो कोई उपायही नहीं, कर्मफलको धीरजके साथ भोगना ही श्रेष्ठ है, मेरी उस दुर्बुद्धिको धिकार होहु जिसके कारण मैं मोक्षके साधनके अयोग्य अवस्थाको प्राप्त हुई हूं अब मुझे इसतरह प्रवर्तना योग्य है जिससे आगामि दुःखोंको प्राप्त न होऊं. इसतरह नाना प्रकार निन्दा, गर्हा करती हुई काल व्यतीत करै. जब तीन या चार दिवसमें विकार बहना बंद होजाय तब अथवा जिस दिनसे आरंभ हुआ हो उसके चौथे दिन (रात्रिसे आरंभ हुआ हो तो दूसरे दिनसे शुमार करना) स्नान कर, शुद्ध हो सर्व ग्रह सम्बन्धी कार्य और उचित शृंगारादि करे. उसे उचित है कि पांचवे दिन स्नानकर, स्वच्छ हो, निर्मल वस्त्र पहिन, शुद्ध द्रव्यले, मन्दिरजीमें जाय और अष्टद्रव्यसे अथवा

एकद्रव्यसे भगवानकी पूजनादि कर शास्त्रश्रवणादि धर्म कार्योंमें प्रवर्त्ते. शास्त्रका लेख है कि इसी दिनसे वह रसोई करने वा चौकामें जाने योग्य होती है. जो स्त्री इसभांति नियमपूर्वक पवित्र होकर पीछे भोजन पानादि भोगोपभोग सामग्रीमें प्रवर्तती है उसके प्रथम दिवसके गर्भाधानसे धर्मात्मा, भाग्यवान, रूपवान, सुलक्षणी, दूसरे दिवसके गर्भाधानसे राजा, महाराजा, मंडलेश्वर पद योग्य, तीसरे दिनके योगसे महामंडलेश्वर चक्रवर्ती और कदाचित पूर्ण पुन्योदयसे चौथे दिवस गर्भस्थिति हो तो तीर्थंकर चरमशरीरी सन्तान भी हो सक्ती है. सो ऐसा कैसे हो? हमारे जैनी भाई तो दिनप्रति धर्म मार्गमें शिथिल और पाप मार्गमें रत होरहे हैं, शुद्धाचरणको छोड़ भ्रष्ट होरहे हैं, अज्ञान अंधकारमें लीन होरहे हैं, यही कारण है कि यह जाति दिन २ निकृष्ट, दरिद्री, पौरुषहीन तथा निरुद्यमी होती जाती है, सो ठीकहीहै आप कुछ समझते नहीं, औरोंकी सुनते नहीं यदि कोई धर्मात्मा उपकार बुद्धिसे उपदेश भी करे तो अच्छी तरह सुननेके बदलेमें उसके उपदेशको हंसी ठठ्ठामें उड़ादेते हैं. उनमेंसे कितनेही तो ऐसी उल्टी समझके होते हैं कि उपदेशदाताके आगमानुसार भले और हितकारी उपदेशको अपनी निन्दा समझते हैं. क्यों

कि शास्त्रोंमें जहां तहां पापोंके त्यागनेका उपदेश है सो आप तो पाप छोड़ते नहीं और उपदेशदाताकी उल्टी निन्दा करते हैं " कि इनको क्या लगता है कुछ काम धन्धा है नहीं, इसलिये बैठे २ दूसरोंकी निन्दा किया करते हैं" इत्यादि. सो ऐसा कहनेका कारण यही है कि आप विद्या पढ़ते नहीं, विद्वानोंकी संगति करते नहीं, स्वाध्याय करते नहीं, शास्त्रोंको चित्त लगाकर सुनते नहीं. भला फिर धर्माधर्म, भलेबुरे, न्याय-अन्याय, भक्ष्य-अभक्ष्य, कर्तव्य--अकर्तव्यका स्वरूप कैसे मालूम हो ? इसीकारण अनाचारोंके फैलनेसे यह जाति दिन २ डूबती जाती है सो क्या किया जावे, इसकालमें सुमार्ग रक्षक जैनी राजा हैं नहीं, जो कुमार्गियोंको दंड देकर सुमार्गपर लावें, रहे सिर्फ जातिके श्रीमान, सो सैकड़े पीछे दो चारको छोड़ बाकी सब अज्ञानता वश लक्ष्मीके चेरे बनकर अहंकारमें चूर, धर्मसे विमुख हो निन्दाके पात्र हो रहे हैं. इसलिये हे जैनबांधवो और बाइयां ! तुम किसीके भरोसे मत रहो, तुम्हारी नैया पार लगानेवाला श्रीगुरुका उपदेश्या आगमही है सो खुद विद्या पढ़कर, स्वाध्याय कर, धर्मको पहिचान, हृदयमें धार कर्तव्यको करो, अकर्तव्यको छोड़ो, पुन्यको करो, पापसे डरो, जिससे तुम्हारा भला हो ॥

पंचम प्रकरण.

मिथ्यात्व निषेध.

दोहा।

कुगुरु, कुदेव, कुधर्म अरु, अग्रहीत मिथ्यात्व।
सेवनकर जग जन दुखी, भोगें तीव्र असात॥ १॥

प्रिय धर्मोत्साही भाइयों और बाइयों! किंचित् विचार तो करो कि तुमने अनादि कालसे जीव पुद्गलादि षट्द्रव्य और जीव, अजीव, आश्रवादि सप्त तत्वोंके स्वरूपको भली भांति नहीं जाना और न श्रद्धान आचरण किया. और न कभी इस बातका विचार किया कि मैं कौन हूं, कहांसे आया हूं, इन कुटुम्बियोंसे संबंध होनेका क्या कारण है, इस पर्यायके पीछे मुझे कहां जाना पड़ेगा, मेरे साथ यहांकी कोई सामग्री जायगी या नहीं, रात्रि दिन जो मैं पाप कर्म कररहा हूं इसका क्या फल होगा, इत्यादि और भी लौकिक पारलौकिक बातोंकी छान-बीन नहीं किई जिससे भेड़िया धसान होकर अंधेकी नांई जिस तिस प्रकार प्रवर्तकर दुःखी होरहे हैं सो यह ज्ञान श्रद्धान होवे कहांसे, जब कभी सुगुरु, सुदेव, सुधर्मका समागम किया होय या उनका

सदुपदेश पाया होय, तो भलीभांति मालूम होजाय कि सब जीव अकेले २ अनादि कालसे इस शरीरके रागी होय इसकी रक्षा तथा भरण पोषण निमित्त नाना प्रकार पापकर्मकर देव, मनुष्य तिर्यंच, नर्क पर्यायमें भ्रमणकर अपने २ शुभाशुभ कर्मानुसार सुख दुख भोगते हैं. कोई देवी-देवता कर्मके उदयको रोक नहीं सक्ता यह जीव आपही अपने भले बुरे करनेको समर्थ है. ऐसा जान जो ज्ञानी पुरुष या स्त्री मिथ्या कल्पनाओंको छोड़ अन्याय और अभक्ष्यसे मुंह मोड़ गृहस्थके धार्मिक षट् कर्मोंमें यथाशक्ति प्रवर्तते हैं वेही पुण्य बंध करके उसकी उदय अवस्थामें सुखी होते हैं. इसके विरुद्ध जो स्त्री पुरुष श्रावक कुल, उत्तम जिनधर्म, सत्य उपदेशका समागम पाय अपने हितको भूलकर दूसरोंके बहकानेसे अधर्मरूप प्रवर्तते हैं, वे सदा दुखी रहते हैं। जहांतक देखा जाता है इसका कारण अविद्याही ज्ञान होना है. सो प्रत्यक्षही देखो विद्याहीन होनेके कारण स्त्रियां विचार रहित होकर कुदेव जो ऊत, पितर, सती, शीतला, देवी, दुर्गा, भवानी, दूल्हादेव, मसानी, सेढू, बूढावावू, गूंगापीर, सय्यद, भैरों, यक्ष, मुसलमानोंकी कबरें, कंठीमाता, बीबी दसमां, नूरी शाहजादी. इत्यादिको पूजतीं, धोकतीं और प्रसाद चढ़ाती हैं. कुधर्म

सेवनकर बड़को पूजनीं, पीपल, आंवला, झूंड, कीकर, केल, पीपल आदिको सींचनीं, कनागत करनीं, मुर्देका आकार बनाय पूजनीं, दीवालपर गोबरसे सांझी माड़ आरती उतारनीं, पुत्र प्राप्तिके लिये घरमें हलदीसे अहोईका आकार बनाय पूजनीं, करवा चौथको सूर्य चंद्रमाको अर्घ देय कहानी (वार्ता) कहनीं, सुननीं, दीपमालिका (दीवाली) की रात्रिको लक्ष्मी (रुपया, मोहर, दीपक आदि) को पूजनीं, एकादशी अथवा चौदसको देव उठावनी करनीं, पूनमको गंगाजमनामें नहानीं, सूर्य चंद्रमाके ग्रहणमें भंगी, डाकोतरा व ब्राह्मणोंको दान देनीं, संक्रांत, व्यतीपात, संतान सातें, गाजबीज माननीं और गणगौर पूजनीं, महादेवको जल चढ़ानीं, शिवरात्रिका व्रत करनीं, सती, कुआ, नदी, तलाव आदिको पूजनीं, द्वादशी, जन्माष्टमी, गूंगानवमी, बरसात, दशहराको माननीं इत्यादि अनेक कुधर्म और पीर, पैगम्बर, फकीर, जोगी, त्रिदंडी, नखीबाबा, ब्रह्मचारी, हंस, परमहंस, रामसनेही, दादूपंथी, कबीरपंथी, आदि अनेक भेषधारी, मायाचारी, कनक कामिनीके अभिलाषी, जगतवंचक, मनुष्योंको धर्म और शास्त्रोंके रोकनेपर भी हठकर माननीं, पूजनीं, संतानकी वांछा करनीं, अपने धर्मको जलांजली देनीं, कुलको

कलंकित करती और नानाप्रकार पापका बंध करतीं हैं उनको जानना चाहिये कि यद्यपि संसारमें सब जीव अपने २ किये कर्मोंका फल भोगते हैं. इन्द्र, धरणेन्द्र, जिनेन्द्र आदि कोई भी देव, देवी, उसे मेटनेको समर्थ नहींहै. तथापि इतना अवश्य है कि जैसे वीतरागी देव, गुरु, धर्मके दर्शन करने, मानने पूजनेसे चित्त निर्मल हो, रागद्वेष घटकर पुन्यके साथ २ सुखकी प्राप्ति होती है वैसेही रागी द्वेषी देव, गुरु, धर्मके समागमसे कषाय बढ़कर पापका बंध हो, दुखकी प्राप्ति होती है. इसके सिवाय जो लोग कुदेवादिकसे लाड़ चाव रखते हैं उनके घरपर आकर वे एक न एक कौतूहल कियाही करते हैं कभी पितर होते हैं, कभी सय्यद बन बैठते हैं, कभी भूतनी, पिशाचनीका स्वांग बनाकर एक न एक तमाशा रोज कियाही करते हैं. जो पुरुष या स्त्री अज्ञानता वश जैनी सरीखी उत्तम जातिमें, श्रावक सरीखे उत्तम कुलमें जन्म लेकर पंचपरमेष्ठी समान वीतराग, परम दयालु, जगतारक, क्षुधा, तृषा, जन्म, जरा, मरण आदि अठारह दोषरहित, सर्वज्ञ, वीतराग देव; सम्पूर्ण परिग्रह त्यागी, आत्मानुरागी, परोपकारी, विषय भोग वांछारहित, परम निर्ग्रंथ गुरु; परम मैत्री भाव कराने वाला, अज्ञान अंधकार विनाशक, जगत्

प्रकाशक, सर्वोत्कृष्ट, दयाधर्मके दर्शक, वीतराग सर्वज्ञ कथित दयामयी धर्मको पाकर भी छोड़ देते और कुदेव, कुगुरु, कुधर्मको वंदते पूजते हैं, वे चिन्तामणि रत्नके बदले कांचखंडको ग्रहण करते हैं सो यह बड़ा भारी आश्चर्य है. उनको न अपने धर्मका कुछ विचार है न कुलका, जिस देवको किसीको पूजते देखा कि आप भी बिना सोचे विचारे पूजने वंदनेको दौड़ जाते हैं. उनको इतना तो सोचना चाहिये कि जैनधर्मके अभिप्रायों और अन्यधर्मोंके अभिप्रायोंमें कितना बड़ा भारी अंतर है ? कहां जैनधर्म तो मोक्षका साधक और कहां अन्यधर्म सत्यमोक्ष * के बाधक और संसार * के साधक हैं. यह जीव बिना पूरी वीतरागताके कदापि निष्कर्म याने मुक्त नहीं होसक्ता और उस वीतरागता प्राप्त करने का साधन एक यह जैनधर्महीं जगतमें दृष्टिगोचर होरहा है. जिसमें मानो वीतरागता कूट २ कर भरी गई है. सोही कवि भूधर दासजीने जैनशतकमें स्पष्ट कहा है.

---

* जीव जबतक शुभाशुभ कर्मोंको करता है तबतक उसकी जन्ममरणकी संतान चलती है इसीको संसार कहते हैं जब यही जीव कर्म रहित होकर शुद्ध अवस्थाको प्राप्त होजाता है तब मुक्त कहलाता है ॥

कवित्त.

कैसे कर केतकी कनेर एक कह्यौ जाय आक दूध गाय दूध अन्तर घनेर है ॥ पीरी होत रीरी पै न रीस करै कंचनकी कहां काक वाणी, कहां कोयलकी टेर है ॥ कहां भानुतेज भारो कहां आगियो विचारो पूनोको उजारो कहां मावस अँधेर है ॥ पक्ष छोर पारखी निहार नेक नीकेकर जैन बैन और बैन इतनोही फेर है ॥ १ ॥

सम्पूर्ण शास्त्र एकमत होकर यही कहते हैं कि विष खाना, अग्निमें पड़ना, जलमें डूब मरना आदि अज्ञानताके कार्य तो एकही जन्ममें दुःख देनेवाले हैं परंतु आत्मस्वरूपकेभुलानेवाले, अकर्तव्यके करानेवाले, ज्ञानशून्य, जगत के ठिगने वाले कुगुरु आदिका पूजना वंदना आदि दुष्कर्म ऊपर कहे हुए मूर्खताके कामोंसे भी बढ़कर हैं. क्योंकि ये संसारमें अनंत जन्म, मरण कराके नानाप्रकार दुःखी कराते हैं देखिये श्रीउपदेश सिद्धान्त रत्नमालामें क्या कहा है– गाथा.

सप्पो इक्कं मरणं, कुगुरु अणांता देइ मरणाइं ॥
तो वर सप्पो गहियं, मा कुगुरु सेवनं भद्द ॥ १ ॥

अर्थ–सर्पके काटनेसे तो एकही वार मरण होता है परंतु कुगुरुके सेवन करनेसे अनंत जन्म मरण होते हैं. इसलिये हे भद्र! हे सज्जन ! सांपका ग्रहण करना तो भला किन्तु कुगुरुका सेवन सर्वथा वर्जनीक है.

ऐसा समझ कर भी जो स्त्रियां अज्ञानता वश पुत्र, संपदा आदिकी इच्छासे ढोंगियोंको मानतीं, पूजतीं और उनके द्वारा ठगाई जाती हैं वे व्यभिचारिणी समान अनेकोंके दरवाजे फिरकर सत्यव्रत गंवाती हैं सो ठीकही है. जगतमें प्रथमतो भोले जीव विशेष (अधिक) हैं. तिनमें स्त्री जाति सबसे भोली है इसीलिये नानाप्रकारके स्वांगोंमें भूलकर अपने धर्मको ठिगाकर भी हर्ष मानती है सो कहो यह कैसी बड़ी भारी मूर्खता है. सो ही आगममें कहाहै. गाथा.

जह कुव्वेस्सारत्तो, मुसिज्जमाणोवि मस्मये हरिसं ॥
तह मिच्छवेस मुहिया, गयं पिण मुणंति धम्म णिहं ॥१॥

अर्थ–जैसे कोई वेश्यासक्त पुरुष धनादिकको ठिगावता हुआ भी हर्ष मानता है. वैसेही मिथ्यात्व भाव करि ठिगाये हुए जीव अपनी धर्म निधिको नाश होनेका कुछ भी विचार नहीं करते.

जैसे व्यभिचारिणी स्त्री अपने परम सुन्दर गुणवान पतिको तज दुष्ट और कुरूप पुरुषका सेवन कर हर्ष मानती है वैसेही यह भी सन्मार्ग तथा सुखके दाता परम दयालु सुगुरु, सुदेव, सुधर्मको छोड़ झूठे ठगियोंकी सेवा करती है. जैसे वेश्याके पुत्रको पिताका ठिकाना नहींहै, वैसेही इन पूजन करनेवाले पुरुष और स्त्रियोंकी

दशा है. ऐसे मनुष्योंसे अगर कोई पूछे कि तुम किस देव, गुरु, धर्मको मानते हो? तो वे भौंचकसे होकर सत्य देव, धर्म और गुरुके कथनसे वंचित रह जाते हैं.

जो स्त्रीपुरुष न कभी मन्दिरको जाकर सुचित्त हो दर्शन करते, न शास्त्र सुनते और न विद्वान पंडितों द्वारा तत्वोंके स्वरूपका निर्णयकर कर्तव्य अकर्तव्यको जानते हैं. उनका विश्वास एक जगह कैसे रहे. वे आज एकको ढोकते मानते, कल दूसरेको भेट देते परसों तीसरेको पूजनेको उद्यत होते हैं. जैसे सड़ा नारियल अनेक घरोंमें चक्कर खाता फिरता है वैसाही उनका माथा भी अनेक देव देवियोंके आगे फूटता फिरता है सोही धर्म परीक्षामें कहा है.

छप्पय.

सर्व देव नित नमें, सर्व भिक्षुक गुरुमाने ॥
सर्व शास्त्र नित पढ़ें, धरम अधरम नहिं जाने ॥
सर्व विरत नितकरें, सर्व तीरथ फिर आवें ॥
परब्रह्मको छोड़, अन्य मारगको ध्यावें ॥
इसप्रकार जे नर रहें, इसी भांति शोभा लहें ॥
आश्चर्य पुत्र वेश्या तनौं, कहौ बाप कासों कहें॥१॥

इसप्रकार जैनियोंके शास्त्रोंकी बातें सुन और उनकी ऐसी कुप्रवृत्ति और मिथ्या विश्वास देखकर ही दूसरी

जातिके मनुष्य उन्हें खिजाते, उनपर हंसते और उन्हें ताना मारकर कहने लगते हैं कि देखो जैनी लोग हिन्दुओंके देवी, देवताओंकी निन्दा करते हुए भी पूजते मानते हैं. सो कैसे मूर्ख, निर्लज्ज और झूठे हैं उनके ऐसे वचन सुनकर भी हमारे भाई लज्जाको प्राप्त नहीं होते और न अपने आचरणको सुधारते हैं. घरमें स्त्रियोंका इतना प्रभुत्व है कि उनके साम्हने पुरुषोंकी कुछ चलती ही नहीं. जैनियोंकी ऐसी दुर्दशा देखकर ही लोगोंने यह लोकोक्ति बनादी है कि "जैनी अंधे, हिन्दू काने, मुसलमान सुझाखे" सो वास्तवमें यदि देखा जाय तो इसका अर्थ भी ठीकही है. जैनी तो अंधे इसप्रकारसे हैं कि वे अपने शास्त्रोंद्वारा सुदेव, सुगुरु, कुगुरु, सुधर्म, कुधर्मका स्वरूप सुनने, समझने पर भी खोटे मार्गपर चलते हैं. हिन्दू काने यों है कि बिना समझे लकीरके फकीर हुए सब देवोंको तो मानते पूजते हैं, केवल जैनधर्मसे दूर भागते हैं. अपने शास्त्रोंमें लिखे हुए ऋषभावतारकी भी निन्दा करते हुए यह कहते हैं कि "हस्तिना पीड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैन-मन्दिरम्" सो उनके ऐसा कहनेका यही प्रयोजन है कि अगर लोग जैनमन्दिरमें जाकर हरएक बातको पूरी

तौरसे समझने लगेंगे तो फिर उनकी पोल खुल जायगी और झूठी बातोंपर लोग विश्वास न करेंगे. और मुसलमान सुभावसे इसप्रकारसे हैं. कि अपने इष्ट "खुदा" के सिवाय दूसरेको मानने पूजनेका विचार स्वप्नमें भी नहीं करते वे साफ २ कहते है "जिसके ईमानमें फर्क है उसके बापमें फर्क है" इस उपर्युक्त लोकोक्तिसे स्पष्ट प्रगट होता है कि जैनी लोग हाथमें दीपक लिये हुए जान बूझकर कुएँमें गिरते हैं. घर २ में बहुधा स्त्रियोंकी यह कार्रवाई देखी जाती है कि जब किसीके सिरमें कुछ भी दर्द दुःख हुआ, आंखें आई या ज्वर चढ़ा, तो दवा करना छोड़ मूर्खों और ढोगिनी स्त्रियोंकी बहकावटमें आकर शीघ्रतासे भोपा, ज्योतिषी, फकीर, साधु, पांड़े, जती आदिके घर पहुंचती और घबराई हुई हाथ जोड़ नानाप्रकार बीनतीकर अपना दुःख सुनाती हैं. तब वे लोग इनको भ्रमान्ध देख कहने लगते हैं कि यह तुह्मारे पितरोंकी कुनट है, तुम अमुक देवीकी बोल, कबूल भूलगई हो, अमुकने तुमपर भूत पिशाच या डायन भेजी है. अमुकने तुमपर चौकी रक्खी है अथवा शनिश्चरका कोप है. इत्यादि बातें कहदेते हैं. तब वे भोली स्त्रियाँ मूर्खोंके कहनेसे नानाप्रकारके पाखंड करनेको उतारु होजाती हैं. भेड़िया धसानकी नांई

दौड़ २ कर सती शीतलाको मनातीं, देवी दुर्गाकी कढ़ाई बोलतीं, भवानीकी बोलारी बोलतीं, गूंगाकी छड़ी चढ़ातीं, डोरू बजवातीं, रात जगवातीं, भगत कुदवातीं, भैरोंके तैल सिन्दूर चढ़वातीं, महादेवपर जल चढ़वातीं, बाबाजीकी टहल करतीं, फकीर जतीको माल खिलातीं, मुस्तंडे बदमाशोंको माल चखातीं, जीव सांटे जीवकी हत्या करवातीं, मुसलमानोंके कबरिस्तानोंको पूजतीं, ताजियोंको रेवड़ी चढातीं, गंडा, डोरा, ताबीज बंधवातीं, भभूत खातीं इत्यादि अनेक निन्दक्रिया करती हैं. जिनके स्मरण करनेसे ही जी थर्रा उठता और अपनी जातिकी ऐसी दुर्दशा और मूर्खता देखकर लज्जित होना पड़ता है. परंतु इतना होनेपर भी वे किंचित सुखी नहीं होतीं किन्तु भ्रमजालमें पड़कर अधिक दुःखी होती हैं. यदि जरा भी विचार शक्तिको काममें लावें तो प्रगट होसक्ता है कि ये तुच्छ देवगुरु जब आपही दुखी हैं तब दूसरोंपर उपकार कर उन्हें सुखी कैसे करसक्ते है? जो रोगी होकर अपना रोग नहीं मिटा सक्ता वह दूसरेको निरोगी कैसे करसक्ता है? इसीलिये एक कहावत प्रसिद्ध है.

छंद.

देवी, दुरगा, सेढ़, शीतला सब मिल हरिये आय।
हरिजी! सब तो तुमको पूजें अब हम कैसे खाँय॥

तब हरिजी झटयों उठ बोले भूमंडलमें जाओ।
जिस घर हमरो नाम नहीं है उसको लूटो खाओ ॥ १ ॥

इससे साफ जाहिर होता है कि इनमें भक्षकोंके सिवाय रक्षक तो कोई दिखताही नहीं. फिर पाप करके सुख चाहना कैसे बड़े आश्चर्यकी बात है. संसारमें एक जिनधर्मही इस जीवका रागद्वेष घटा कर सुखी करता है.

यहां पर कोई भोली, जिनधर्मसे विमुखा, मिथ्यात्वसे पगी हुई स्त्री कहने लगे कि "हमतो बालबच्चेवाले हैं, गृहस्थीमें अनेक जंजाल बने रहते हैं. इसलिये हमें तो सब कुछ करना पड़ता है. न करें तो गृहस्थीचारा कैसे चले ? हम जोगी बाबा तो हैं ही नहीं जो सब त्यागकर बैठ जांय, बालबच्चोंका घर है शीतलाको न माने पूजें तो लड़कों बच्चोंकी रक्षा कौन करे ? तब उसे यों समझाना कि "अगर देव, देवियोंकी पूजा, मानता हीसे पुत्र, पौत्रादि होते और जीते हों, तो जो लोग उनके सेवक होकर अच्छीतरह पूजा, मानता करते हैं उनके लाखों उपाय करनेपर भी सन्तान क्यों नहीं होती ! अथवा पूजा करते २ भी सन्तान क्यों मरजाती है ! जिनको सारा जन्म शीतलाकी पूजा करते २ बीता, उनकी संतान बहुधा शीतलाके प्रकोपसे ही मरजाती है. यदि उसमें रक्षा करनेकी शक्ति थी तो क्यों नहीं

रच्चा किई ? इसके विरुद्ध मुसलमान, कृस्तान, नास्तिक आदि जो किसीको भी पूजते मानते नहीं उनके संतान होती और पूजा मानता किये बिना ही कुशल रहती है. इससे ये बात अच्छी तरहं साबित होगई. कि जो कुछ होता है वह अपने शुभ (पुन्य) अशुभ (पाप) कर्मोंके अनुसार होता है. संसारमें कोई भी किसीका भला बुरा नहीं करसक्ता दूसरे कारण तो निमित्तमात्र है. यहांतक कि देव, दानव, मनुष्य, देवी, चेत्रपाल, भैरू, भोपा, गणेश, शीतला, पीर, पैगम्बर आदि व नारायण, चक्रवर्ति, प्रतिनारायण, कामदेव, तीर्थंकर सबही कर्मके आधीन हैं. कोई किसीके कर्म मेटनेको समर्थ नहीं है. प्राकृत पिङ्गल सूत्र २ परिच्छेद १०२ में कहा है.

पाण्डउ वंसहि जन्म करीजे. संपअ अज्जिअ धम्मक दीजे
साउजु हिट्ठिर संकट पाआ. देविक लिक्खिअ केणमिटाआ

अर्थ—पांडव वंशमें जन्म लेनेवाला उत्तम संपदा और धर्मका धारण करनेवाला युधिष्टिर सरीखे महाराज भी संकटको प्राप्त हुए तो कहिये भाग्यको कौन मेट-सक्ता है ? स्वामिकार्तिकेय अनुप्रेचामें स्पष्ट कहा है. गाथा.

आउक्खयेण मरणं, आउदाऊ ण सक्कदे कोवि ।
तह्मा देविन्दोविय, मरणाउ ण रक्खदे कोवि ॥ १ ॥

अर्थ-आयु कर्मके क्षयतें मरण होता है और आयु कर्मके देनेको कोई समर्थ नहीं इसीकारण देवोंका स्वामी इन्द्र भी किसीको मृत्युसे नहीं बचासक्ता. और भी देखिये भगवान आदिनाथ ब्रह्मा, प्रथम तीर्थंकर, कर्म भूमिके प्रवर्तक भरत चक्रवर्तिके पिता और इन्द्रादि देवों करके पूज्य थे सो भी अंतराय कर्मके प्रबल उदयसे छः महीनेतक निराहार विहार करते रहे. परम पुरुषोत्तम भगवान रामचंद्रको बनवास और सीताका वियोग प्राप्त हुआ. इसीप्रकार नवमें नारायण श्रीकृष्णको उत्पत्ति समय न कोई गानेवाला मिला न मृत्युसमय कोई रोनेवाला.

इन सब दृष्टान्तोंसे हर कोई स्त्री पुरुष जानसक्ता है कि जिसप्रकार जीव भले बुरे काम करता है उसीप्रकार उसको उन कर्मोंका फल भी लाचार होकर भोगना पड़ता है. ऐसा समझकर भी जो स्त्रियां हठाग्रह वश यथार्थ उपाय नहीं करतीं, वे दीपक लेकर कुएमें गिरती हैं. देखो कैसी मूर्खताकी बात है कि यदि किसी लड़के बच्चेको शीतला याने माताकी बीमारी होजावे तो उस बच्चेका यथार्थ इलाज न करके माताजीके गीत गानेको तय्यार होतीं, पूजन करनेको दौड़तीं, माथेपर अँगीठी रख पूआ, पुड़ी लेकर मानता मनानेको जातीं, और

माथेके बल माताकी मड़ियातक दौड़ती हैं. जहां न कोई देवी देवता की सूरत है न मूरत. लड़कोंने दस पांच पत्थर रखदिये कि मूर्ख स्त्रियोंने पूजा, मानता, आरंभ करदी. यदि कोई उनसे पूंछता है कि तुह्मारे बालकको क्या होरहा है तो कहने लगती हैं कि "माई मिहरबान होरही है" भला माताकी कृपामें तो लड़का रोगी और सब घर दुखी होरहा है अगर नाराज हों तो क्या दशा हो? बलिहारी इस अज्ञानता और भेड़िया चालपर.

यहांपर अवसरानुसार चेचकके रोगकी उत्पत्तिका कारण व इलाज लिखाजाता है.

प्रगट रहे कि माता (मा) के पेकटी गर्मी जो नव महीनेतक बाहिर न निकलकर माताके पेटमें ही रह-जाती उसका थोड़ा वा अधिक अंश गर्भस्थित संतानके शरीरमें अवश्य रहजाता है. वहही विकार गर्भका खान-पान व ऋतुका बाह्य कारण पाकर बालकके शरीरमेंसे फूट फुन्सी (चेचकके दानों) द्वारा बाहिर निकलता है, जिसे लोग माता, चेचक, भवानी या शीतलाकी बीमारी कहते हैं. यह केवल शारीरिक विकार है. किसी देवी, देवका कोप नहीं है, इसका सबसे अच्छा इलाज यही है कि बच्चेको लुटपनसे ही टीका लगवावे याने गुदाव

देवे, ऐसा करनेसे कुछ विकार तो निकल जाता और कुछ भीतरका भीतर शांत होजाता है, कभी २ टीका लगानेवाला व सामान अच्छा न होनेके कारण टीका लगानेका बराबर फायदा नहीं होता और थोड़ी बहुत शीतला निकल आती है याने दो तीन दिन साधारण ज्वर चढ़कर सबसे पहिले सिरमें पीछे सारे बदनपर फुन्सी नजर आने लगती है. जब इसतरह चेचक निकलनेका हाल मालूम हो तो कड़ाही न चढ़ाना, रजस्वला स्त्रीकी दृष्टि बचाना (बच्चेकी माता रजस्वला हो तो रोक नहीं है) सर्दीकी चीजें ज्यादातर नहीं खिलाना और तर पदार्थ खिलाना व सफाईके साथ रखना योग्य है. कदाचित रोगका जोर अधिक मालूम हो तो चतुर वैद्यसे इलाज कराना चाहिये. जो स्त्रियां योग्य उपाय न करके केवल माताके गीत गा २ कर रोग शान्त करना चाहती हैं वे जान बूझकर अपने बालकको आपही फांसीपर चढ़ाती हैं. तिसपर और भी एक गजब यह है कि इस जातिकी स्त्रियां प्रमाद वश मंदिरजीमें दर्शन करनेके लिये नाममात्रको जाती हैं. कितनी तो दर्शनही नहीं करतीं मन्दिरजी जानेके नामसे उनको ज्वर चढ़ता है. नमस्कार मंत्रकी जाप फेरनेके लिये माला हाथमें लेना सर्प पकड़नेके समान समझती हैं.

बहुत ही कम भाग्यवती स्त्रियें होंगी जिनके दर्शन करके भोजन करनेका नियम हो. ऐसी मूर्खा स्त्रियोंके बालकोंको जब चेचक निकलती है तो वे देवीके रुष्ट होनेके भयसे जिनेन्द्र देवके दर्शन करना बिलकुल छोड़ देती हैं सो ठीकही है "विनाश काले विपरीत बुद्धिः" अर्थात् जब बुरे दिन आते हैं तब बुद्धि भ्रष्ट होजाती है. यदि वेही भोली स्त्रियाँ मन्दिरजीमें जाकर ज्ञानपूर्वक धर्मोपदेश सुनें वा आप स्वाध्याय करें तो कर्तव्य अकर्तव्य, सांच, झूठका ज्ञान होकर वे मिथ्या ढोंगोंमें न पड़ें. और कुदेवों व कुगुरुओंसे बचकर धर्म ध्यानपूर्वक योग्य उपाय करें. यह निश्चय रहे कि बहुधा मिथ्या संस्कारोंके कारणही बालक अज्ञानी, मिथ्यात्वी, दुर्बुद्धिके धारक और अनाचारी होते हैं. जो स्त्रियां नीच, व्यभिचारी जगतके ठगनेवालोंके फंदेमें पड़ती हैं, वे अवश्य अपना शील व्रत, धर्म और श्रद्धानरूपी धन गमा बैठती हैं. आजकल प्रायः, साधू, फकीर, पांड़े, जती, बाबा, जोगी, सन्यासी, भट्टारक आदि इन्हीं अवगुणोंके धारक देखे जाते हैं. शीलवंती स्त्रियोंको उचित है कि कभी स्वप्नमें भी इन लोगोंके पास न जावें. जो पुरुष अज्ञानता वश अपनी स्त्रियोंको संतान और सम्पत्तिके लोभसे ऐसे पाखंडी ठगोंके पास जाने देते हैं. वे जान बूझकर

अपनी स्त्रियोंको भ्रष्ट करके डुबाते हैं. क्योंकि ये लोग धर्मात्माओं सरीखे नाम धराके इन्द्रियों और मनको वश करनेके बदले माल खा २ कर पुष्ट होते और बहुधा इसी बहानेसे व्यभिचार सेवन करनेकी तजवीज करते हैं. धर्मबुद्धि स्त्रियोंके निकट ऐसे धूर्तोंकी दाल नहीं गलती, उनकी संतान धर्मके प्रसादसे स्वयमेवही उत्तम, पुण्यवान, सुशील और विद्वान होती हैं. प्रथम तो उनकी संतानको किसीप्रकारका रोगही नहीं होता. कदाचित् पूर्व पापके उदयसे कुछ रोगादिक हो भी जावे तो माताके धर्मरूप प्रवर्तनेके प्रभावसे वा अटल श्रद्धानके प्रतापसे शान्त होजाता है सो यह कोई भी आश्चर्यकी बात नहीं है क्यों कि धर्मका प्रभाव अचिन्त्य है. धर्मात्माकी परछांई मात्रसेही दूसरोंके विघ्न, दुःख, रोग, शोकादिक दूर होजाते हैं तब स्वयं उनके दूर होजावें तो क्या बड़ी बात है? श्रीपद्मपुराण नामक ग्रंथमें परम शीलवंती श्रीविशल्याकी कथा लिखी हुई है. कि इसके पूर्वजन्मके शील, जप, तपके प्रभावसे ऐसा अतिशय उत्पन्न हुआ कि जिसके स्नान-जलके स्पर्शमात्रसेही लक्ष्मणकी अमोघ शक्ति और सेनाके घायलोंकी पीड़ा दूर होगई. यह सब दृढ़ सम्यक् दर्शन हीका प्रभाव है. अहो! जिस श्रद्धानके प्रभावसे मोक्ष

सरीखी अक्षय संपदा प्राप्त होजाती है उससे शारीरिक रोगादिकका मिटना क्या बड़ी बात है ?

इसप्रकार संसारमें भटकाने वाले मिथ्यात्वको छोड़ अर्हंत देव, निर्ग्रंथ गुरु, दयामई धर्मको सेवनकर षट द्रव्य, सप्त तत्व, नव पदार्थका स्वरूप जान आत्माका श्रद्धानकर सच्चे सुखको पाओ, मनुष्य पर्याय पानेका यही लाभ है.

यहांपर प्रसंगवशात् सुशील स्त्रियोंको और भी नीतिकी शिक्षा दीजाती है. वर्तमान कालमें नीच जातियोंकी कुसंगतिके प्रभावसे उत्तम कुलकी स्त्रियें भी पुत्रोत्पत्ति व विवाहके समय निर्लज्ज गीत गाली, सीठने आदि गाया करती हैं. सो यह बात उच्चकुलके सर्वथा विरुद्ध है. जरा विचारो तो सही. यह कैसी लज्जाकी बात है कि जहां अपने गुरुजन, माता, पिता, चाचा, ताऊ, सास, सुसर, देवर, जेठ, बेटा, बेटी, बिरादरीके अन्य लोग और अन्य धर्मावलम्बी व्यवहारी व कमीन याचक आदि बैठे हों वहांपर फूहड़ गीत गाकर व सीठने देकर निर्लज्जता प्रगट करना क्या भले घरकी स्त्रियोंका काम है ? जिन शब्दोंके भाषण करते हुए वेश्याओंको भी लज्जा आती है ऐसे कुशब्दोंको परदेके भीतर बैठनेवाली और सास, ससुरके

साह्मने जोरसे न बोलनेवाली स्त्रियोंको सरे मैदान बाजार, मेले, खेले, रस्ते आदिमें जोर २ से चिल्लाकर बकना क्या गजबकी बात नहीं है ? बड़े प्रसन्न हो २ कर दूसरोंकी शीलवंती, उत्तम आचरणकी धारक स्त्रियोंको व्यभिचारिणी कहना वा अनेक, लांछन लगाना कैसी भारी निन्दनीय बात है. इन सब अत्याचारोंका कारण उन स्त्रियों तथा उनके पतियोंकी अज्ञानता है. हमें तो उनके ऐसे निर्लज्जतापूर्वक फूहड़ गीतोंके गानेका कारण यही मालूम होता है. कि संसारमें जितनी मात्र लाज शरम होतीहै वह आंखोंमे होती है. सो इन्होंने पहिलेहीसे अपनी आंखोंपर वस्त्र (पर्दा) डाल लिया है. जिन शब्दोंके उच्चारण करते हुए व्यभिचारिणी स्त्रियोंको संकोच होता है उन्हें बेशरमीके साथ चिल्लाकर कहना मानो अपने व्यभिचारकी घोषणा करना है. जिसप्रकार एक कुट्टनी दस पांच वेश्याओंको साथ बैठाकर व्यभिचार सेवन करानेके भावसे बुरे शब्दोंद्वारा आये गये पुरुषोंको लुभाती है उसीप्रकार एक बड़ी निर्लज्ज गानेवाली वृद्धाके निकट बहुतसी युवा स्त्रियें बैठकर बुरे २ गीतोंद्वारा अपना व्यभिचारीपना प्रगट करतीं और छोटी २ पुत्रियोंको पास बैठाकर उनके कोमल हृदयपर इन कुसंस्कारोंका

असर डालती हैं. विवाहोत्सव सरीखे पवित्र कार्यमें तो इनको पूरा २ मौका मिलता है फेरेके दिन पुरुषतो वरको साथ लेकर कन्याके पिताके यहां पाणिग्रहण करानेके लिये चले जाते हैं. ऐसा अवसर पाकर स्त्रियां अपनी सहेलियों व कुटुम्बी तथा नीच जातिकी और भी बहुतसी स्त्रियोंके साथ इकट्ठी होकर एक युवा स्त्रीको पुरुषका वेष बनाकर और उसके साथ एक स्त्रीका संबंध स्थापनकर अथवा अकेला पुरुषवेष याने बाबा बनाकर मनमानी कुचेष्टा करती हुई ढोलोंके साथ नीच गीत गाती हुई सरे बाजार निकलती हैं जिसको देख सुनकर लज्जाको भी लज्जा आती है. हाय २ धिक्कार होहु ऐसे मनुष्योंको जो अपनी स्त्रियोंको इसप्रकारके निन्दनीय कार्योंसे नहीं रोकते. क्या कोई कहसक्ता है? कि ऐसे जाति, धर्म और लोक विरुद्ध कार्य करनेवाली स्त्रियां शीलवंती रहसक्ती हैं? कदापि नहीं. कदापि नहीं. उनमें कुछ न कुछ व्यभिचारका अंश तो अवश्यही होगा. या यों कहिये कि स्त्रियोंमें मूर्खताका होना ही उनमें नानाप्रकारके दोष आरोपण कराना है.

इसके सिवाय स्त्रियां अज्ञानता वश अन्ध परंपरायकी रीतिसे विवाहके समय अन्यमतावलंबियोंका अनुसरण करती हुई देवी, दिहाड़ी, चक्की, चूल्हा,

देहली, गणेश, कुह्मारका चाक, गधा आदिको पूजनीं और साथ २ निर्लज्ज गीत भी गाकर ऐसा समझती हैं कि इन खोटी बातोंके करनेसे विवाह निर्विघ्न समाप्त होगा, सो यह विचार उनका सर्वथा भ्रमरूप है. भला सोचो तो सही, कि खोटे और मिथ्या कर्म करके कोई सफलता कब पासक्ता है ? कदापि नहीं. जो ज्ञानी धर्मात्मा हैं वे जन्मसे मरणतकके सम्पूर्ण संस्कार शास्त्रानुकूल करके पुण्य बंध करते जिससे सर्व विघ्न दूर होकर स्वयमेवही सर्वप्रकार आनन्द प्रवर्तता है. वे विवाहादिक कार्य भी ऋषिप्रणीत जिन धर्मानुकूल करते हैं, वर्तमानमें जो विवाह सम्बंधी नेग व क्रियाएँ जारी हैं उनका पता सूक्ष्म और परमार्थदृष्टि करके लगाया जाय तो निश्चय होता है कि वे शास्त्रानुकूल क्रियाएँ हों, उलट पलटकर इसप्रकार नष्ट भ्रष्ट होगईं और उनके नाम भी अपभ्रंश होगये हैं. जैसे किसी २ देशमें विवाहके पूर्व कुह्मारके चक्रकी पूजा करनेकी कुप्रथा जारी है. जिसका प्रयोजन सिद्ध चक्र यंत्रकी स्थापना है. इसी यंत्रको भांवर के पूर्व विवाह मंडपमें लानेकी क्रियाओंका अपभ्रंश गणावना, विनायकी हैं इसीप्रकार और भी कई क्रियाएँ हैं जिनके यथार्थनाम और पद्धतियोंको जानकर अति हर्षके साथ २ श्रद्धान

दृढ़ होता है. सो यह ज्ञानी पुरुष स्त्रियोंका कार्य है कि वे हरएक कार्यके यथार्थ स्वरूपको जानकर ठीकरीतिसे व्यवहार करें और व्यभिचारके प्रचार करनेवाले तथा कामियोंके रागरूप परिनाम करनेवाले व ज्ञानियोंके निकट लज्जाजनक ऐसे लोक निंद्य व अनर्थ दंडरूप भंड गीत कभी भूलकर न गावें. और न ऐसे गीत गाने-वाली स्त्रियोंके निकट बैठें क्योंकि इससे शीलमें दूषण आता है. सिवाय इसके लोग निन्दा करने लगते हैं देखो ये उच्चजातिकी स्त्रियाँ निर्लज्ज होकर घाट, बाट, हाट, मुहल्लादिमें जिस तिस प्रकार निन्द्य गालियाँ बक-कर अपनी जाति व धर्मको कलंकित कररही हैं. ऐसा जान जो उत्तम कुलकी शीलवती स्त्रियाँ संसारसे भयभीत होकर लोक परलोक सुधारा चाहती हैं. और जिनको अपने यश, अपयशका ख्याल है वे कदापि भूलकर मिथ्यात्वसेवन आदि निन्द्यकार्य नहीं करतीं और शुभ क्रियाएँ वा धार्मिक गीत गाकर पुन्य बंध करती हैं जिससे उनका, उनके कुल और धर्मका यश जगतमें फैलता है.

अष्टम प्रकरण.

बिधवाओंका कर्तव्यकर्म.

दोहा.

नर भव यौवन धान्य धन, अरु विवेक विज्ञान ॥
पाय धर्म सेवन करहु, काटौ कर्म सुजान ॥ १ ॥
जो कदाच दुख आ परै, तौ न करहु कछु सोग ॥
पूरव करनी जिमि करी, धरि धीरज फल भोग ॥ २ ॥
धर्म कर्ममें अटल रहु, कटैं पूर्वकृत पाप ॥
पुण्य कर्म नूतन बँधे, सुख पावे नित आप ॥ ३ ॥

इस पुस्तकमें स्त्रियोंके योग्य और तो सब शिक्षाएं लिखी जाचुकी हैं केवल थोड़ासा यही उपदेश लिखना शेष रहगया है कि कदाचित् पाप कर्मके उदयसे कोई स्त्री बिधवा होगई हो तो उसे अपना शेष जीवन किस-प्रकार व्यतीत करना चाहिये.

प्रगट रहे कि विवाह होनेपर पुत्र और पुत्रीकी पति और स्त्री संज्ञा होजाती है. वे दोनों अनादि नियमानुसार आजन्मके लिये एक सूत्रमें बँधकर सुखदुखके भोक्ता होते हैं. उन दोनोंके बुद्धिमान होने और ऐकमत्य होकर लौकिक पारलौकिक सुख देनेवाले मार्गपर चलनेसे केवल उसही

कुटुम्बका कल्याण नहीं होता, बरन ऐसेही सुकुटुम्बोंके समूह अपनी जाति तथा देशका कल्याण करसक्ते हैं. इसीलिये दम्पतिको अपने तथा परके हितार्थ पुस्तकमें कही हुई आरंभिक शिक्षाओंके अनुसार चलना चाहिये. और भविष्यके लिये उन शिक्षाओंका प्रसार अपनी संतानमें करके उसे धर्मनीतिके मार्गपर चलनेकी प्रेरणा करना अवश्य है. हरएक कुटुम्बीको यह भी उचित है कि अपनी आमदनीके भीतर खर्च करे. याने जहांतक संभव हो, आमदनीका आधा हिस्सा कुटुम्ब निर्वाहमें, चौथाई पुन्य दानादि परोपकारी कार्योंमें व्ययकर शेष चौथा भाग बचतमें रक्खे, क्योंकि बचा हुआ द्रव्य रोग, शोक, व्याह-शादी आदि अवसरोंपर काम आता है. घरमें खर्च किसरीतिसे करनेसे बचत होसक्ती है इसका जानना हरएक स्त्रीपुरुषको अत्यावश्यक है क्योंकि इसके यथार्थ ज्ञान होनेसेही मनुष्य योग्य व्यवहार साधकर बचत कर सक्ता है. यह खूब समझ रक्खो कि घरकी पूंजीसेही बरकत होती और वही वक्तपर काम आती है. यदि बचत न रक्खी जाय तो आवश्यकता पड़नेपर दूसरोंके दरवाजे अपनी इज्जत गवाँकर मन माने व्याजपर कर्जा लेना पड़ता है जिसका नतीजा बहुधा यही होता है कि रात्रिदिन इसीमें

व्याकुल रहकर नानाप्रकारके पापकर्मोंद्वारा धन कमा-नेकी फिकर करनी पड़ती है. ऐसे पुरुषोंकी बाजारसे साख उठजाती और फिर उनसे लैन दैन करनेमें हर-कोई आदमी संकोच करने लगता है. जाति बिरादरी पुरा पड़ौस अथवा गांव पर गांवके लोग जो पहिले फिजूल खर्ची करते समय वाह २ करते थे वही आज साह्मने नहीं देखते "किशायद कुछ कर्जा न मांगने लगे" यहांतककि यह कर्जा बापदादोंतककी प्रतिष्ठाको धूलमें मिलादेता है. इसीलिये नीतिमें कहा है "उतने पांव पसारिये जितनी लांबी सौड़" जो पुरुष इस मंत्रको स्मरण करते हुए गृहस्थाश्रममें प्रवर्तते हैं वेही परम सुखी होकर अपने कल्याणमें प्रवर्त सक्ते हैं. इसके विरुद्ध जो लोग विना आगा पीछा सोचे कर्ज लेते हैं वे जान बूझ कर अपने जीवनको दुःखमय करते हैं, पहिले तो विवाह शादी या गमीमें घड़ी भरकी वाह २ के वास्ते हजारों रुपया यहां वहांसे निकालकर खर्च करडालते, पीछे लड़ाई भिड़ाई, नालिश, फर्यादके दुःख सहकर और रात्रि दिन इसी दुःखमें डूबकर रोगी हो अल्प अवस्थाहीमें कालके गालमें समाजाते अथवा जीते रहते हैं तो बड़ी दुर्दशाके साथ अपने जीवनके दिन पूरे करते हैं सो यह सब अज्ञानता और कुसंगका फल है. यही

कारण है कि जो जैन जाति एक समय भारतवर्षकी प्रतिष्ठित जातियोंमें शिरोमणी गिनी जाती थी आज वही कुरीतियोंके वश पड़कर फिजूल खर्ची करके धन-शून्य होरही है. अतएव हरएक पुरुष स्त्रीको इस शिक्षा पर पूरा २ ध्यान देकर मितव्ययता पूर्वक अपनी आमदनीके अनुसार घरू व जातीय कामोंमें खर्च करना उचित हैं. इसके सिवाय दम्पतिको धर्मनीतिके अनुसार चलकर संसारयात्रा पूरी करना चाहिये जिससे गृहस्थाश्रमका सुख प्राप्त हो.

जो कदाचित् अभाग्योदयसे कोई स्त्री विधवा होजाय तो उसे उचित है कि जो पुत्र मयाने और गृहस्थीके भार चलानेवाले हों या घरमें जेठ, देवर, ससुरादि हों तो उनके आधीन रहे, उनकी आज्ञानुसार चले. यदि कुटुम्बमें कोई अपना पालन पोषण करनेवाला न हो तो आप अपनी कुल जातिके योग्य न्यायपूर्वक उद्योग करके दो पैसे कमा संतोष पूर्वक धर्ममें प्रवर्तें.

अकसर देखा जाता है कि बहुतसी स्त्रियां पतिवियोग का दुःख आपड़ने पर महीनों, वर्षोंतकही नहीं, किन्तु जिन्दगी भर रात्रि दिवस रोयाही करती हैं. छाती, माथा कूटतीं और अनेक प्रकार विलाप करती हैं सो यह उनका रोना जंगलमें चिल्लानेके समान कौन

सुनता है और कौन इनके दुःखको दूर करसक्ता है ? यह तो सब अपने दुष्कर्मोंका फल है अब रोनेसे क्या होसक्ता है. रोना, शोक करना तो सिर्फ मूर्खताही है. फिर उससे भी अधिक मूर्खता जाति तथा कुटुम्बकी और २ स्त्रियोंकी है जो शाम सुबह उसके घर जाकर और उसके पतिके गुण गा २ कर आप झूठ मूठ रोतीं और उस स्त्रीको अच्छी तरह रुलाती हैं. जिस जगह और जिस जातिमें यह रिवाज है वहां मानो अज्ञानता और निर्दयताने घरही करलिया है. वह दुखिया विचारी धर्म कर्मको छोड़ केवल रोनेहीमें मग्न रह तीव्र आर्त परिणामों द्वारा नर्कायु का बंध करती है. वर्षों तक बाहिर नहीं निकलती सो यह बात तो योग्य है कि विधवा स्त्री निष्कारण यहां वहां न फिरे परंतु दर्शन करनेके लिये मन्दिरतक भी न जाना कैसी भारी भूल है. यदि जराभी ध्यानपूर्वक विचारा जाय तो स्पष्ट होजायगा कि पापकर्मके नाश करनेवाले और दुःखको दमन करनेवाले तो दर्शन, स्वाध्याय, पूजा, पाठादि धर्म-कार्यही हैं फिर इन्हें छोड़ना और मूर्खोंके कहनेमें लग-जाना क्या सयानपन है ? क्योंकि सांसारिक खानपान लैन, दैन, आदि तो छूट ही नहीं सक्ते, अकेला धर्मही ऐसा है जिसके विषयमें कोई प्रेरणा करनेवाला नहीं

भला फिर विधवापनेका दुःख कैसे दूर हो? इसके अति-
रिक्त कितनीही कुटिला, अज्ञानता वश कुसंगतिमें पड़-
कर पतिवियोगके दुःखको भूल, मदोन्मत्त हो, पूर्ववत्
विषय कषायोंमें प्रवृत्त व्यभिचार सेवन करती हुई
अपने दोनों कुलोंका नाम डुबाती अथवा विधवाविवा-
हद्वारा दूसरे पुरुषका संयोगकर जन्म २ के लिये पुनः
विधवापनेका बीज बोती हैं और अन्तमें जगतके निंद्यसे
भी निंद्य कार्य करने लगती हैं जिससे उन्हें सारा
जगत उँगली उठा २ कर बताता है कि यह अमुक बड़े
घरकी बेटी बहू है जिसने भ्रूणहत्या अथवा बाल-
हत्या की है. वे कुटिला नानाप्रकारके सुन्दर मनोहर
भड़कीले वस्त्राभूषण पहिन नानाप्रकार स्वादिष्ट भोजन
कर कामेच्छा बढ़ानेवाले गीत गाकर वेश्याओंके समान
निर्लज्ज पापिनी होकर जाति धर्मकी निन्दा कराती हुई
दोनों कुलको अपयशके समुद्रमें डुबाती हैं क्योंकि जिस
पापके उदयसे इस जन्ममें यौवनावस्था पाकर पतिवि-
योगका असह्य दुःख पाया, मानो उसी पापकी फिर
भी पक्की नीम डालती हैं ऐसे स्त्रियोंके लिये अधिक
क्या कहा जाय, उनकी होतव्यताही खोटी है मानो
उन्होंने जैनजातिको कलंकित करनेके लिये अवतार
धारण किया है. ऐसा जानकर उत्तम कुलकी बहू

बेटियोंका कर्तव्य है. कि वह पतिवियोगके दुखको पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मका फल समझ संतोषपूर्वक आयु व्यतीत करें. क्योंकि कर्मका उदय अमिट है. प्राणी पंच पाप रूप प्रवर्तने वक्त तो कुछ खयाल नहीं करता, अंधा होकर इसी धंधेमें मग्न रहता है; परंतु कर्मोंके पक्कावस्था प्राप्त होनेपर जब इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोगकी प्राप्ति होती है तो पीछे हाय २ के सिवाय दूसरा उपाय ही नहीं सूझता. सो अब हाय २ करनेसे उल्टे दुःख बढ़नेके सिवाय और क्या होसक्ता है ? इसलिये उचित है कि अपने संचित सुख दुःखको धीरज धरके भोगे और यह चिंतवन करे कि अहो पापकर्मके मेटनेको अब कौन समर्थ होसक्ता है देखो ! पूर्व दुष्कर्मके फलसे राजा महेन्द्रकी पुत्री अंजनासती पतिकी अप्रसन्नताके कारण २२ वर्षतक वियोगिनी रह नानाप्रकार त्रास सह गर्भके भारको धारण किये हुए बनमें प्रवेशकर अनेक कष्ट सह कालक्षेप करती भई और सीता सरीखी पतिव्रताको झूठे कलंकके कारण पतिकी आज्ञासे बनमें जाना पड़ा तिसपर भी दुःखका अन्त न आया और सत्यव्रतकी परीक्षाके निमित्त अग्निकुंडमें प्रवेश करना पड़ा, इसीप्रकार अनेक महान २ पुरुष भी पापके उदय से राजा से रंक और सुखीसे दुखी होगये तो हम-

सरीखे तुच्छ जीवोंकी क्या कथा है. और भी बिचारना योग्य है कि कदाचित् मैंने पूर्वजन्ममें श्रीजिनेन्द्र देवके प्रतिबिम्बका अनादर या अविनय किया होगा. जिन मंदिर या चैत्यालयके उपकरण चुराये होगें, श्रीजिन-मन्दिरमें अर्पण किया हुआ निर्मायल द्रव्य भक्षण किया होगा. ऋतुवंती होनेपर या और किसीप्रकार मन, बचन, कायकी अशुद्धिता पूर्वक मैंने मुनीश्वरों वा उत्तम श्रावकोंको आहार दिया होगा, शास्त्र छुवे होंगे, मन्दिर गई होऊंगी या मन्दिरमें अशुद्ध द्रव्य चढ़ाया होगा, जिनमन्दिरमें प्रमादवश कोई कुचेष्टा किई होगी, मुनिदानमें अंतराय पाड़ा होगा, धर्मात्माओंकी झूठी निन्दा करी होगी, झूठी चुगली खाई होगी, झूठा कलंक लगाया होगा जिस पापके उदयकर मुझे यह असह्य बिधवापनेका दुःख प्राप्त हुआ है. तथा पूर्वले जन्ममें दूसरोंकी देखादेखी अनेक मिथ्यात्व सेवन करे होंगे, कुदेव पूजे होंगे, बड़, पीपल, आंवला और केलेमें पानी नाख २ (चढ़ा २) मिथ्या कल्पना वा वांछा करी होगी, शीतला, मसानी, देवी, दुर्गाकी भेंटकर जीवहत्या किई होगी, किसी प्राणीके सुख भोग में अंतराय किया होगा जिसके उदय आनेपर मेरे भोगोपभोगमें अन्तर पड़ा. मैंने पूर्व-

जन्ममें किसी मृगनैनीके बालकका विछोह किया होगा, पक्षियोंके घोंसले वा मधुमक्खियोंके छत्ते तोड़ विध्वंस किये होंगे, बन, ग्राम अथवा पशुवाड़ेमें अग्नि लगाई होगी; अनछान्या जल पिया होगा. या रसोई बनाने, वस्त्रादि धोनेमें वर्ता होगा. रसोई विवेकरहित अशुद्ध, बिना निरखे परखे करी होगी; रात्रि समय रसोई बनाकर वा भक्षणकर हिंसा उपजाई होगी; अभक्ष्य भक्षण किया होगा; कंद, मूल, मिरका, जलेबी, शहद, मांस, मदिरा, मक्खन खाया होगा; जूँआ, लीख, कीड़ी, मकोड़ी आदि जीव मारे होंगे; झाड़ वृक्षादि काटे तोड़े होंगे; दीन हीन जीवोंको सताया होगा; जिस पापसे मैं दीन दशाको प्राप्त हुई हूं. सास, ननदसे दुर्वचन कहे होंगे; वृद्धावस्थामें सास, ससुरका निरादर किया होगा, गालियां दी होंगी या ठीक समयपर भोजन पान नहीं दिया होगा; भूखे प्यासे रक्खे होंगे; पतिकी अवज्ञा किई होगी; तीर्थोंको जाकर कुशीलके परिणाम किये होंगे; दशलक्षणी, अठाई, रत्नत्रय, रोहणी, पंचमी, अष्टमी, चतुर्दशी आदिपर्व दिनोंमें धर्म लोप, बेमर्याद, स्वच्छंद होय पापक्रियामें प्रवृति किई होगी. धर्मात्मा जीवोंसे ईर्षा, द्वेष, विरोध किया होगा, पंच पापमें प्रवृत्ति किई होगी. व्रत नियम लेकर भंग किये होंगे

इत्यादि पापोंके फलसे मैं इस दुःख अवस्थाको प्राप्त हुई हूं. इसलिये अब मेरा यही कर्तव्य है कि धैर्य धारणकर इस सन्मुख आई आपत्तिको निर्विकल्पतापूर्वक भोगूं और आगेके लिये सर्व पापोंसे चित्तको हटाकर सावधानी पूर्वक धर्ममें तत्पर होऊं. जो मैं ऐसा न करके अन्यथा प्रकार प्रवर्तूंगी तो न जाने आगे कौनसी दुर्गतिमें पड़कर तीव्र दुःख भोगने पड़ेंगे. इससे मेरे तो एक धर्मका ही शरण है. यही दुःखसे पार करनेवाला और भव २ में सुख देनेवाला है. ऐसा निश्चयकर दान, व्रत, तप, नियम, पूजन, स्वाध्याय पूर्वक वह धार्मिका स्त्री अपनी आयु पूर्ण करे, सांसारिक विषयोंसे चित्तको रोक स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु और कान इन पंच इन्द्रियों और मनको वशमें करे. अपने निर्विघ्न शीलकी रक्षाके निमित्त तथा लोक परलोक सुधारने और आत्मकल्याण करनेके लिये उसे इस प्रकार वर्तना चाहिये. शृंगारसूचक वस्त्राभूषण न पहरे क्योंकि स्त्रीको शृंगार करना सौभाग्य अवस्थाहीमें शोभा देता है. विधवा का शृंगार करना लोकनिंद्य, धर्मविरुद्ध और शीलका घातक है, ऐसा जान शृंगार सर्वथा तजे और देश पद्धति अनुसार सफेद या काला वस्त्र पहिने, बहुरंगे, सुर्ख, चटकदार और सधवाओंसरीखे वस्त्र न पहिने. नेत्रोंमें

सुरमा, अंजन काजल आदि न आंजे, मस्तकपर तिलक बिन्दी आदि न लगावे, पान, इलायची, केसर आदि पुष्ट और कामोद्दीपक मसालोंको न खावे, शरीर, वस्त्रों वा बालोंमें तेल, फुलेल, अतरादि न लगावे और दूध, दही, घृत, मोदक आदि पुष्टकारक व गरिष्ट भोजन व मादक द्रव्योंको न खावे, क्योंकि ऐसा करनेमे इन्द्रियाँ प्रबल होकर मनको विषयोंकी तरफ दौड़ातीं और शीलभ्रष्ट करनेको तय्यार होती हैं. उसे यह भी उचित है कि किसी स्त्री वा पुरुषके साथ हँसी, कौतूहलादि क्रिया न करे. स्वांग, नाच, तमाशे, भांडोंके कौतुक व साधारण मेलोंके देखनेको भूलकर भी न जावे और न खोटे गीत गावे, सुने. आपसरीखी सहेलियोंमें बैठ खोटी वार्तालाप न करे, न सुने. दूसरी स्त्रियोंको पतियुक्त नाना शृंगार आभूषण आदि किये हुए देख मनमें भूर अदेखसका भाव न करे. क्योंकि नीतिका यह वचन है.

दोहा.

संपति विपतिके बीचमें, जो पछतावे कूर ॥
माशा बढ़े न तिल घटे, जो कुछ लिखा अँकूर ॥१॥
पूरव भोग न चिन्तवै, आगम वांच्छा नाहिं ॥
वर्तमान वर्ते सदा, सो सुखिया जगमाहिं ॥ २ ॥

ऐसा विचार बिधवा स्त्रीको उचित है कि शक्ति

अनुसार नानाप्रकार तप याने एकासना, उपवास, नीरस भोजन, बेला, तेला आदिद्वारा इंद्रियोंके वेगको रोके, उन्हें कृश करे. नित्यप्रति पूजा, दान, शास्त्र-स्वाध्याय, गुरुभक्ति, संयम, तप, पठन पाठन, शास्त्र-श्रवण, धर्मध्यान और धर्मचर्चा आदि शुभ कार्योंको करे जिससे पुण्यका बंध और पापकी उपशान्ति हो. भावार्थ–जो स्त्रियां समता भाव धारणकर सदा धर्मका समागम रखकर अन्तमें सावधानी सहित समाधि मरण करती हैं उन्हें फिर स्त्रीपर्याय धारण नहीं करना पड़ती वे यहांसे मरकर स्वर्गमें महर्द्धिक देव होय मध्य लोकमें राजा, महाराजा हो, धर्ममें प्रवर्त मुनिव्रत धार कर्मका नाशकर मोक्षके अनन्त, अनुपम, अक्षय, अलौकिक और अप्रमेय सुखको प्राप्त होती हैं. धन्य है उन स्त्रीरत्नोंको जो इसप्रकार सुकृत करके आप सुखी होतीं और दूसरोंको, सुमार्ग बताती हैं. ऐसा जान हे जैन जातिकी धार्मिक स्यानी, पुण्यवती, बेटी बहुओं ! जो तुमने पूर्ण भाग्योदयसे मनुष्य पर्याय, उत्तम जैन कुल, धर्मका समागम और उपदेशकी पूर्णता पाई है. तो इस पर्यायका एक क्षणभी धर्मरहित मत खोओ. सोते, बैठते, चलते, फिरते, आठों प्रहर अपने परणामों की संभाल रक्खो. यह भव समुद्रके किनारे लगनेका समय

है जो इसमें कुछ भी चूक हुई तो ठिकाना नहीं रहेगा. इसीलिये परोपकारी परमाचार्योंने करुणा बुद्धि धार बार २ पुकारकर चेताया है. देखो यह मनुष्य पर्याय कैसी सर्व श्रेष्ठ और कार्यकारी है.

कवित्त.

जाकों इन्द्र चाहें, अहमेन्द्रसे उमाहें जासों जीव मुक्ति जाय भवमल वहावे है॥ ऐसो नरजन्म पाय विषय विष खाय खोयौ, जैसे कांच सांटे मूढ माणिक गमावे है॥ माया नदी बूड भींजा, काय बल तेज छीजा, आया पन तीजा, अब कहा बन आवे है ॥ तातें निज सीस ढोलें, नीचे नैन किये डोलें, कहा बढ बोले वृद्ध बदन दुरावे है॥ १ ॥ तथा और भी कहे हैं.

कवित्त.

जोई क्षण कटै, सो तौ आयुमें अवश्य घटै, बूंद २ बीते जैसे अंजुलीको जल है॥ देह नित क्षीण होत, नैन तेज हीन होत, यौवन मलीन होत, क्षीण होत बल है॥ आवै जरा नेरी, तकै अंतक अहेरी, आवै परभव नजीक जात नरभव निफल है ॥ मिलके मिलापी जन, पूंछत कुशल मेरी, ऐसी औ दशामें मित्र काहेकी कुशल है ॥२॥

और संसारकी विचित्र गति सबपर प्रगटही है कि.

कवित्त.

काहू घर पूत जायौ, काहूके वियोग आयौ, कहूं राग रंग कहूं रोया रोय करी है ॥ जहां भानु ऊगत उछाह गीत गान देखे, सांझ समय ताही थान हाय २ परी है ॥ ऐसी जगरीतिको न देख भयभीत होत, हा ! हा ! नर मूढ़ तेरी मति कौन हरी है ॥ मानुष जनम पाय, सोवत विहाय जाय, खोवत करोरन की एक २ घरी है ॥

ऐसा जानकर भी संसारी मूढ़ जीव कैसी मूढ़तामें मग्न होरहे हैं.

कवित्त.

देखो भर जोवनमें पुत्रको वियोग भयौ, तैसेही निहारी निजनारी काल मगमें ॥ जे २ पुरायवान जीव दीसत हैं जगत मांहि, रंक भये फिरें तेही पनही न पगमें ॥ येते पै अभाग, धन जीतब से धरें राग, होयना विराग जानै, रहूं गौ अलगमें ॥ आंखिन बिलोके अंध सूसेकी अंधेरी करे ऐसे राज रोगको इलाज कहा जगमें ॥ ४ ॥

ऐसी हम तुम संसारी जीवोंकी भ्रम बुद्धि और अज्ञान दशा देख, श्रीगुरु करुणा बुद्धिकर बार २ समझावे हैं कि.

जौलों देह तेरी, काहू रोगसौं न घेरी जौलौं जरा नाहि

नेरी, जासों पराधीन पर है॥ जौलों जम नामा वैरी, देय ना दमामा, तौलों माने आन रामा, बुधि जाय ना विगर है ॥ तौलों मित्र मेरे निज कारज संभार लीजे, पौरुष, थकैगौ फिर पीछे कहा कर है ॥ अहो आग आये, जब झोपड़ी जरन लागे, कूपके खुदाये कहौ, कहा काज सर है ॥ ५ ॥

ऐसा जान हे जैन जाति सुधारक भाइयो ! और मुख्यतः कारणभूत बाइयो ! मेरा आपसे बार २ यही निवेदन है कि आप प्रमाद तजि, मिथ्यात्व खोय अन्यायसे दूर भाग, धर्मकार्यमें तत्पर होय इसलोक, परलोकका सुख प्राप्त करो. ऐसी सब सुखदाई सामग्री पानेका तो यही लाभ है कि सुमार्गमें लग, कुमार्गको छोड़ आत्म कल्याण करना. जो अब भी इस हितकारी शिक्षापर ध्यान नहीं देओगी. तो अवसर चूके पछताना ही हाथ रहेगा. और यह भूल आगे बहुत दुखदाई होगी.

दोहा.

मानुष तन, श्रावक कुलहि, पावौ दुर्लभ फेर ॥
यह अवसर मत चूकना, सद्गुरु भाषें टेर ॥ १ ॥
माता, भगनी, सुता सम, हमरौ सबपर ख्याल ॥
सविनय शिक्षा वरणई. यह जैनी जयचाल ॥ २ ॥

सप्तम प्रकरण.

सूतक निर्णय.

(श्रीत्रिवर्णाचारानुसार)

श्लोक ॥ सूतकं वृद्धिहानिभ्यां, दिनानि दश द्वादश ॥
प्रसूतिस्थान मासैकं, दिनानि पंच गोत्रिणाम् ॥ १ ॥

अर्थ—जन्मका सूतक दशदिन का, मृत्युका १२ दिनका होता है. प्रसूतिवाली स्त्रीको १ माह और गोत्रके मनुष्य को पांचदिन का सूतक होताहै.

श्लोक ॥ प्रव्रजिते मृते काले, देशान्तरे मृते रणे ॥
संन्यासे मरणे चैव दिनैकं सूतकं भवेत् ॥ २ ॥

अर्थ—जो गृह त्यागी दीक्षित भया ताका मरणमें (अपने कुलका हो) तथा देशांतर, संग्राम और संन्यास में मरण करे तो १ दिन का सूतक जानना. अदि अपने कुल का देशान्तरमें मरण करे और द्वादश दिन उपरान्त सुने तो १ दिनका सूतक होय. यदि बारह दिनके पहले सुने तो बाकी दिनो का सूतक जानना ॥

श्लोक ॥ चतुर्थे दशरात्रिं स्यात्, षड्रात्रिं पुंसिपंचमे ॥
षष्ठे चतुराशुद्धिं, सप्तमेच दिनत्रयं ॥ ३ ॥

श्लोक ॥ अष्टमे पुंसहो रात्रि, नवमें प्रहर द्वयं ॥
दशमे स्नानमात्रं स्यात्, एतद्गोत्रस्य, सूतकम् ॥ ४ ॥

अर्थ—तीन पीढ़ीतक १२ दिन, चौथी पीढ़ीमें १० दिन

पंचमी पीढीमें ६ दिन. छटवीं पीढ़ीमें ४ दिन. सप्तमी पीढ़ीमें ३ दिन, आठवीं पीढ़ीमें १ दिन रात्रि, नवमी पीढ़ीमें दो प्रहर और दशवी पीढ़ीमें केवल स्नानमात्र सूतक जानना.

श्लोक ॥ यदि गर्भे विपत्तिः स्यात्, श्रवणां चापियोषितां ॥ यावन्मास स्थितो गर्भे, स्तावद्दिनानि सूतकम् ॥५॥

अर्थ–स्त्रीका गर्भ पतन होने जितने मासका गर्भ होय उतने दिनका सूतक मानना ॥

श्लोक ॥ पुत्रादि सूतके जाते, गते द्वादशके दिने ॥ जिनाभिषेकपूजाभ्यां, पात्रदानेन शुद्ध्यति ॥ ६ ॥

अर्थ–पुत्रोत्पत्ति आदिका सूतक होते १२ दिन उपरान्त भगवान की अभिषेक, पूजा, तथा पात्रदान करि शुद्धि होयहै ॥

श्लोक ॥ अश्वाच, महिषी, चेटी, गौप्रसूता गृहांगणे ॥ सूतकं दिनमेकं स्यात, गृहवाह्ये न सूतकं ॥ ७ ॥

अर्थ–घोडी, भैस, दासी, गौ आदि जो अपने अंगन अर्थात् गृहमें जने तो १ दिनका सूतक होताहै, जो गृहवाहिर जने तो सूतक नहीं.

श्लोक ॥ सतीनां सूतकं हत्या, पापं षण्मासकं भवेत् अन्या सामान्यहत्यानां, यथापापं प्रकाशयेत् ॥ ८ ॥

अर्थ–अपनेको अग्निमें जलायलेय ऐसी सती होनेका पाप ६ मास ॥ और हत्याओंका पाप यथायोग्य जानना.

श्लोक॥ दासी दास तथा कन्या, जायते म्रियते यदि ॥
त्रिरात्रिं सूतकं ज्ञेयं, गृहमध्ये तु दूषणम् ॥ ९ ॥

अर्थ–जो दासी दास तथा कन्या जन्मे तथा मरे तो ३ रात्रिका सूतक है यदि गृहके बाहिर होय तौ सूतक नहीं होयहै ॥

श्लोक ॥ महिष्याः पक्षकं क्षीरं, गोक्षीरं च दशोदिनं ॥
अष्टमे दिवसे ऽजाया, क्षीरं शुद्धं न चान्यथा ॥ १० ॥

अर्थ ॥ भैंसका १५ दिनमें, गायका १० दिन में और बकरीका ८ दिनमें जनने बाद दूध खाने योग्य शुद्ध होय है

श्लोक ॥ जातदन्तशिशोर्न्नाशे, पित्रोर्दशाहसूतकं ॥
गर्भश्रवे तथा पाते, विनष्टे तु दिनत्रयं ॥ ११ ॥

अर्थ–जिस पुत्रके दन्त आगये हों ऐसे पुत्रके मरण का १० दिनका सूतक और गर्भश्राव तथा गर्भपात और गर्भविनाश का ३ दिन सूतक है ॥

इति.

आशीर्वाद.

जो धर्मात्मा सज्जन भाई तथा बाइयें परमार्थ बुद्धि करके इस ग्रंथको पढ़ेंगे, पढ़ावेंगे, इसके अनुसार आचरण करेंगे, कराबेंगे वे यश कीर्ति पाय, पुण्य बंध करेंगे. उनका घर कुटुम्ब, परिवार तथा लोकमें सदा आदर होगा. जो स्त्रियां इस शिक्षापर ध्यान देकर गृहस्थी-सम्बन्धी कार्यों में प्रवर्तेंगी, उनकी कुक्षिसे सुलक्षणी, रूपवान्, धार्मिक और आज्ञाकारिणी संतान होगी. वे अपने पतिकी वल्लभा होंगी. उनके घरमें लक्ष्मीका बास होकर दुःख, दरिद्र, रोग, शोक दूर भागेगा और धर्ममें विशेष रुचि होनेसे स्वर्गादिकके सुख तथा परंपराय मोक्षकी प्राप्ति होगी. अतएव इसे ध्यान लगाकर बांचो, पढ़ो, स्वाध्याय करो, सुनो, सुनाओ और जिस तिस प्रकार इस शिक्षारूपी हारको धारणकर शोभायमान होओ.

ग्रंथकर्ताकी ख्याति कवित्त.

दिल्ली सेती पश्चिमठाम, वसै है गन्नौर गाम ताकौ वासी जयदयाल जैनी इक जानिये ॥ धर्महीसे राखै प्रीति, गहै नहिं दूजी रीति, अग्रवाल गोयल गोत्र मंद बुद्धि मानिये ॥ श्रावक धरम सार, तामें लख हीनाचार, कीन्हो यो विचार, नारी धर्मजु वखानिये ॥ लखि मोहि

ज्ञानहीन, क्षमौ गुणीजन प्रवीण, कीजिये सुधार अरु भूल चूक छानिये ॥ १ ॥

दोहा.

लाला गंगा विष्णु सुत, रामनाथ वर भाल ॥
तसु सुत हरपरसादमल, ता सुत यह जयद्याल ॥ १ ॥
विक्रमाब्द उन्नीस शत, ठावन ऊपर जान ॥
पौष शुक्ल दोयज तिथी, धन राशी परमान ॥ २ ॥
ता दिनसे आरंभ कियौ, यह शुभ कार्य महान ॥
पढ़ै सुनै अरु आचरै, सो पावे शिवथान ॥ ३ ॥

समाप्त.